श्रीदुर्गा-साधना

पुष्प २

सर्व-बुद्ध्यधिदेवीयमन्तर्यामि-स्वरूपिणी।
दुर्ग-सङ्कट-हर्त्रीति, देवी दुर्गेति कीर्त्यते।।

प्रकाशक : परा-वाणी आध्यात्मिक शोध-संस्थान
श्रीचण्डी-धाम, अलोपी-देवी मार्ग, प्रयाग-२११००६

मुम्बई-शाक्त-सम्मेलन (आठवाँ अधिवेशन)

संक्षिप्त विज्ञप्ति

भारतीय संस्कृति एवं संस्कृत भाषा की रक्षा तथा संवर्धन

जगज्जननी के आशीर्वाद और **श्रीगुरु-मण्डल** की प्रेरणा से '**मुम्बई-शाक्त-सम्मेलन**' का आठवाँ अधिवेशन **बोरीवली, मुम्बई** में सम्पन्न हुआ। सम्मेलन में विभिन्न प्रान्तों से पधारे विद्वज्जनों ने अपनी वाणी से श्रोताओं को **भगवती की आराधना-उपासना** के मार्ग पर आगे बढ़ने के लिए प्रेरित किया।

प्रातः १० बजे **भगवती के 'पूजन-अर्चन-आरती'** एवं **परम श्रद्धेय गुरुवर पं० रमादत्त जी शुक्ल**, जिनकी प्रेरणा से **मुम्बई** सहित विभिन्न प्रान्तों में **अखिल भारतीय शाक्त-सम्मेलन** की शाखाएँ सञ्चालित हो रही हैं, के चित्र पर माल्यार्पण के उपरान्त सम्मेलन का **प्रथम सत्र** प्रारम्भ हुआ। सत्र की अध्यक्षता **श्री अय्यर जी** ने की तथा **श्री ऋतशील जी शर्मा** ने मुख्य-अतिथि के आसन को सुशोभित किया। इस अवसर पर '**मुम्बई-शाक्त-सम्मेलन**' के अध्यक्ष **पं० वेणीमाधव जी त्रिपाठी** ने **श्री ऋतशील जी शर्मा** को '**कुल-नन्दन**' की उपाधि से विभूषित करते हुए अभिनन्दन किया। तदुपरान्त '**मुम्बई-शाक्त-सम्मेलन**' के पदाधिकारियों द्वारा अन्य विद्वज्जनों का भी अभिनन्दन किया गया।

सत्र का श्रीगणेश '**श्री दुर्गा-भक्ति-मण्डल**', **मलाड, मुम्बई** के **श्री चौबे जी** एवं मित्रों द्वारा की गई **श्रीगणपति** एवं **गुरु-वन्दना** के साथ हुआ, जिसके फल-स्वरूप उपस्थित साधकों-श्रोताओं की अन्तरात्मा '**बन्दउँ ब्रह्म-रन्ध्र गुरुवर जी के चरण**' के नाद से आप्लावित हो गई। तदनन्तर **भगवती-स्वरूपा 'पञ्च कन्याओं'** द्वारा प्रस्तुत '**स्वागत गान**' अत्यन्त भाव-पूर्ण रहा। वक्ताओं के क्रम में मुझ अकिञ्चन को भी अवसर प्राप्त हुआ। मैंने सीधी-सादी बात कही कि ऐसे **सम्मेलन** में जहाँ **उच्च-कोटि की साधनात्मक चर्चा** हो, वहीं **सामान्य जनोपयोगी लघु साधनाओं**-जो सामान्य भाषा-भाषियों की रुचि एवं सामर्थ्य के अनुकूल हों पर भी प्रकाश डाला जाना उपयोगी होगा।

भारतीय संस्कृति एवं संस्कृत भाषा की रक्षा तथा संवर्धन एक अन्य महत्त्व-पूर्ण बिन्दु है, जिस पर मैंने उपस्थित महानुभावों का ध्यान आकर्षित करने का प्रयास किया। मैंने सभी लोगों के सामने प्रश्न किया कि यदि हम अपनी नई पीढ़ी को केवल 'जॉनी जॉनी यस पापा' रटाकर खुश होते रहे, तो क्या हम स्वयं **संस्कृति एवं संस्कृत के पराभाव के अपराधी** नहीं होंगे? मैंने कहा मेरा ऐसा मानना है कि जो हिन्दी भी शुद्ध नहीं पढ़ सकता, वह '**स्तोत्र**'-**पाठ** या '**आवरणार्चन**' क्या कर पाएगा? अतः सभी शाक्तों से मेरी यही कर-बद्ध प्रार्थना है कि इस दिशा में सुदृढ़ प्रयास पारिवारिक, सामाजिक एवं राष्ट्रीय स्तर पर किए जाएँ।

-'**कुल-वणी-रत्न' पं० महेन्द्र मिश्र**, उपाध्यक्ष, अखिल भारतीय शाक्त-सम्मेलन, प्रयाग

सूचना : '**चण्डी**' पुस्तक-माला के द्वारा प्रकाशित **श्रीकमला-कल्पतरु, पुष्प (३)** एवं **ककारादि श्रीकाली-सहस्त्र-नाम (सविधि)** शीघ्र ही अलग पैकेट द्वारा भेजा जा रहा है।

‘कौल-कल्पतरु’ चण्डी की विशेष प्रस्तुति

वर्ष-७०

श्री दुर्गा-साधना

पुष्प-२

श्री दुर्गा-स्तव-मञ्जरी

आदि-सम्पादक

प्रातः-स्मरणीय ‘कुल-भूषण’ पं० रमादत्त शुक्ल

सम्पादक

ऋतशील शर्मा

*

प्रकाशक

पण्डित देवीदत्त शुक्ल स्मारक

परा-वाणी आध्यात्मिक शोध-संस्थान

कल्याण मन्दिर प्रकाशन

श्रीचण्डी-धाम, प्रयाग-राज-२११००६ ☎ ९४५०२२२७६७

Website : www.paravani.org Email : chandi_dham@rediffmail.com

अनुदान ४०/-

प्रकाशक

पण्डित देवीदत्त शुक्ल स्मारक

परा-वाणी आध्यात्मिक शोध-संस्थान

कल्याण मन्दिर प्रकाशन

श्रीचण्डी-धाम, प्रयाग-राज-२११००६ ☎ ९४५०२२२७६७

श्री दुर्गा

ॐ ह्रीं
दुं दुर्गायै
नमः

मन्त्राणां मातृका देवी, शब्दानां ज्ञान-रूपिणी।
ज्ञानानां चिन्मयातीता, शून्यानां शून्य-साक्षिणी।।
यस्याः परतरं नास्ति, सैषा दुर्गा प्रकीर्तिता।

अर्थात् दुर्गा देवी मन्त्रों की जननी और शब्दों का ज्ञान हैं।
ज्ञान में भी चेतना से आगे और
शून्यों में भी शून्य की साक्षिणी हैं।
जिनसे बढ़कर कोई नहीं है, उनका नाम दुर्गा है।

तृतीय संस्करण

वैशाख शुक्ला तृतीया, श्री परशुराम-जयन्ती, क्रोधी सं० २०६८ वि०-०५ मई, २०११

परा-वाणी प्रेस, अलोपी-देवी मार्ग, प्रयाग-राज (उ०प्र०)

अनुक्रमणिका

तामाग्नि - वर्णां तपसा ज्वलन्तीं,
वैरोचनीं कर्म - फलेषु जुष्टाम्।
दुर्गां देवीं शरणमहं प्रपद्ये।
असुरान्नाशयित्र्यै ते नमः।।

***

'श्रीदुर्गा'-नाम-माहात्म्य

* 'राष्ट्र-गुरु' परम पूज्य स्वामी जी महाराज, दतिया

■ १. 'द'-कार २. 'उ'-कार, ३. 'रेफ', ४. 'ग'-कार और ५. 'आ'-कार–इन ५ वर्णों के योग से '**मन्त्र**'-स्वरूप '**दुर्गा**'-नाम बनता है। '**दैत्यों**' के नाश के अर्थ को '**द**'-कार बतलाता है, '**उ**'-कार विघ्न का नाशक है, '**र**'-कार रोग का नाशक है, '**ग**'-कार पाप का नाशक और '**आ**'-कार भय तथा शत्रु का विनाशक है।

■ '**देव्युपनिषद्**' में कहा गया है–'**अग्नि-तत्त्व** के समान वर्ण (रङ्ग) वाली अर्थात् लाल वर्णवाली, '**तपसा**' अर्थात् अपने ज्ञान-मय रूप से प्रदीप्त, कर्म-फलार्थियों द्वारा विशेष रूप से सेवनीय **वैरोचनी** (अग्नि-तत्त्व की शक्ति) अथवा **विरोचन** द्वारा उपास्य **श्रीदुर्गा देवी** की शरण को हम प्राप्त करें, जो **असुरों का नाश** करती हैं, उन्हें हमारा नमस्कार हो।

■ '**दु+र्+गा**'–ये तीनों वर्ण **अग्नि**-वर्ण के नाम से प्रसिद्ध हैं। '**द**'-कार को **अत्रि-नेत्रज** या **अत्रीश** कहते हैं। अतः वीजाभिधान के मत से यह **आग्नेय** है। '**रेफ**'–प्रसिद्ध **अग्नि-वीज** है। '**ग**'-**कार** की संज्ञा–'**पञ्चान्तक**' है। **महा-प्रलयाग्नि** का बोधक होने से इस '**ग**'-**कार** की यह संज्ञा है। इस प्रकार '**दुर्गा**'-नाम स्पष्ट रूप से **अग्नि-वर्णा** है।

■ सर्वतोभावेन देवताओं के शरण-भाव प्राप्त होने पर **दुर्ग** नामक असुर को मारने से **श्रीदुर्गा**-नाम प्रसिद्ध हुआ है। यह '**श्रीदुर्गा सप्तशती**' में कहा गया है।

■ अविमुक्तक **काशी**-क्षेत्र में जीवों के मरने पर **भगवान् शङ्कर** पावन '**दुर्गा**'-नाम का उपदेश देकर मुक्ति प्रदान करते हैं, यह प्रसङ्ग '**महा-भागवत**' में **नारद-शङ्कर-संवाद** के रूप में कहा गया है।

■ उक्त प्रमाणों से '**दुर्गा**'-**नाम** की महत्ता अवगत होती है। '**रुद्र-यामल तन्त्र**' में भी **भगवान् शिव** ने इस नाम की महिमा बताई है।

■ '**कलि-काल**' में '**नाम**'-जप का बड़ा माहात्म्य है। '**दुर्गा**'-नाम **सर्वथा सुलभ** और **महान् फल का देनेवाला** है। इसलिए इसका स्मरण सर्वदा करना चाहिए।

***

श्रीदुर्गा-तत्त्व

* 'आम्नाय-धुरन्धर' पण्डित-प्रवर श्री हरिशास्त्री जी दाधीच

श्रीदुर्गा महा-माया हैं, इन्होंने सारे संसार को अपने में बसा रखा है। आप ही २५ और ३६ तत्त्वों की राजधानी हैं। अवतारों की उलट-फेर आपकी सीमा में हुआ करती है। आप कैसी हैं, आपका का स्वरूप कैसा है, इन बातों का पूर्ण वर्णन कोई भी नहीं कर सकता। जिस पक्षी की जितनी उड़ान होती है, वह उतना ही उड़ सकता है। इसी प्रकार जिस साधक, योगी, भक्त, महात्मा का जितना अनुभव होता है, वह उतना ही इसके विषय में कह सकता है।

हम अपने **गुरु-देव** से प्राप्त और अनुभूत सार की बात कहते हैं कि जिसे **ब्रह्म, परमात्मा, पुरुष, महेश्वर** कहा जाता है, उस **पर-तत्त्व** की विकास की सीमा इसी **श्रीदुर्गा महा-माया** के भीतर है। अर्थात् वह प्रकाशित होता है और हो सकता है, तो इसी में होता है और हो सकता है और इसके किए से ही होता है।

'ब्रह्म' साक्षात् नहीं होता है और होता है, तो इसी **श्रीदुर्गा महा-माया** के रूप में सर्व-प्रथम होता है। इसलिए यही **'ब्रह्म'** है, यही **'शक्ति'** है, यही **'माया'** है, यही **'प्रकृति'** है। यही **भगवती दश महा-विद्याओं** की और **दश** तथा **२४ अवतारों** की मूल भूमिका (कारण) है। इसे वह पावर हाउस (**शक्ति-केन्द्र**) समझिए, जहाँ से सभी प्रकाश की लाइनें शुरू होती हैं। संसार का कोई काम, कोई चिह्न, कोई विचार, कोई सङ्केत या कोई जल-स्थल-आकाश-पाताल कहीं कोई सत्ता ऐसी नहीं है, जो इससे शून्य हो।

'अथर्व' की यह श्रुति इसका कितनी सुन्दरता से वर्णन करती है। देखिए-

मन्त्राणां मातृका देवी, शब्दानां ज्ञान-रूपिणी।
ज्ञानानां चिन्मयातीता, शून्यानां शून्य-साक्षिणी।।
यस्याः परतरं नास्ति, सैषा दुर्गा प्रकीर्तिता।

उक्त उक्ति से यह स्पष्ट समझ में आता है कि जिससे पर कोई कहीं कुछ नहीं है, वह **'दुर्गा-तत्त्व'** है। **'दुर्गा'**-नाम कितना सुन्दर और सार्थक है! देखिए, **'दुर्गा'** इस नाम में **'दुर्-गा'** ऐसा विश्लेषण है। **'दुर्'**-पद से **दुःख, दुरित, दोष, दुराचार, दुराशा, दुरीहित** आदि जीवन और पुरुषार्थ-प्राप्ति के सभी विपरीत लक्ष्य लिए गए हैं। उन सबसे पार करती है, बचाती है, उद्धार करती है। उन दुःखादि को हरती है, दूर करती है, इत्यादि भावोंवाला **'दुर्गा'**-पद है।

कभी **'सूर्य'-बिम्ब** को थोड़ी देर २ से ४ मिनट दृष्टि को ठहरा कर देखिए और ध्यान दीजिए, **'सूर्य'** में तेजो-मय कुछ झिलमिलाहट होती दिखाई पड़ती है, जैसे कोई बिजली का गोला (तारों का वलय) आदि स्फुरण करता है। उसी तरह यह **ब्रह्म (पुरुष)** में विलास करती है, झिलमिलाती रहती है। इसकी स्फुरणा से ही **ब्रह्म (पुरुष)** को प्रकाश मिलता है। फिर वह जगत् को प्रकाशित करता है।

'**देव्यथर्वशीर्ष**' में '**दुर्गा**'-शब्द की निरुक्ति इस प्रकार है–

दुर्गात् सन्त्रायते यस्मात्, देवी दुर्गेति कथ्यते।
तां दुर्गां दुर्गमां देवीं, दुराचार-विघातिनीम्।।
नमामि भव-भीतोऽहं, संसारार्णव-तारिणीम्।

उक्त उक्ति के सभी अर्थ ऊपर लिखे गये हैं। '**श्रीदुर्गा**' (**महा-माया**)–'**एक**' है क्योंकि यह '**एक**' ही सर्वत्र विराजमान है। यही '**अनेक**' भी है, क्योंकि यही अनेक रूपों में अनेक आकार से प्रकाश पाती है। यही '**अजन्मा**' (**अजा**) है क्योंकि इसका जन्म कहीं नहीं मिलता है।

'**भगवद्-गीता**' की इस सूक्ति के अनुसार–'**नाहं प्रकाशः सर्वस्य, योग-माया समावृतः।**' यह **भगवान्** (**ब्रह्म**) पर छाई हुई है अर्थात् '**ब्रह्म**' इससे समावृत है, ढँका हुआ है। पाठक लोग इस श्लोक में '**समावृत**'-शब्द को जरा विचार से देखेंगे, तो बड़ा आनन्द प्राप्त होगा। इस पद का अर्थ प्रायशः सभी टीकाकारों तथा भाष्यकारों ने '**समावृतः संछन्नः**' ऐसा ही किया है, देखिए **गीता-शाङ्कर-भाष्य** और उसकी भी टीकाएँ तथा **श्रीधरी मधुसूदनी** आदि। सभी इससे ढँका हुआ वह **ब्रह्म** (**भगवान्**) है, ऐसा कहते हैं। अब सोचिए, ढँकनेवाला पदार्थ ढँके जानेवाले पदार्थ से बड़ा ही होता है, छोटा नहीं। तभी वह ढाँक सकता है किसी भी अपने से छोटे पदार्थ को। इस अर्थ में कोई भी ननु-नच नहीं चल सकती।

भगवान् श्रीकृष्ण (**परमात्मा**) स्वयं **अर्जुन** को समझा रहे हैं कि मैं सर्व-साधारण के या सभी के प्रकाश में नहीं आता हूँ क्योंकि **योग-माया** (**पर-शक्ति**) से ढँका हुआ हूँ। **योग-माया** मुझे ढाँपे रहती है, यह भावार्थ हुआ। इस अर्थ से **ब्रह्म-वेत्ताओं** (**वेदान्तियों**) का **ब्रह्म-तत्त्व** परिच्छिन्न तथा लघुता-निष्ठ बन जाता है। इस पर कभी किसी **वेदान्ती** या और **भक्त विद्वानों** ने विचार नहीं किया है, न करते हैं। करें भी क्या? कर नहीं सकते, इसे बदल नहीं सकते, यह भी तो **योग-माया** का उदाहरण है। अस्तु! यह वही **योग-माया**, जो '**ब्रह्म**' को ढाँपकर विलास करती है, **श्री श्रीदुर्गा** है। इसने अपने **पर-तत्त्व चित् -रूप** को अपने भीतर ही प्रकाशित किया है। इसी प्रकार भगवती को **चिद्विलासिनी** कहा है। **चेतना** को भी विलासित करनेवाली यह **दुर्गा** आश्रयाश्रयीभाव से **चित्** ही कहलाती है। फिर भी पूर्वोक्त **सूर्य-मण्डल** के दृष्टान्तानुसार समझ लीजिए कि तेज भी अपने विशिष्ट तेज का प्रकाशक होता है।

'**श्रीदुर्गा**' मोह को भी मोहित करती हैं, जैसा '**पर-देवी-सूक्त**' में कहा है–'**महा-मोह-मोहिनि**'। '**महा-मोह**' सांख्यवालों के अनुसार **अविद्या**-रूप **प्रकृति**-भेद-तम महा-स्तर है। इसे यह **दुर्गा** (**महा-माया**) मोहित कर देती है। अथवा, '**मुह वैचित्र्ये**' विचेत चेतना-रहित निःसार बेकार कर देती है। इसी से मोहित करना समझिए। लोक में भी मोहित होना, बेहोश करना, अचेत करना ही है। मोहनादि प्रयोग में मोहन करना, स्व-वश करना ही कहलाता है।

'**अथर्व**' की इस श्रुति में '**द्वे ब्रह्मणो वेदितव्ये**'–दो ब्रह्म–१. **निर्गुण** और २. **सगुण** वर्णित हैं। इनमें **निर्गुण ब्रह्म** वर्णनातीत है। वह **दुर्गा** (**महा-माया**) का ही परात्पर रूप है, जिसे

श्रुति '**वाङ्-मनसयोरगोचरं**' कहती है और **सगुण ब्रह्म** तो **दुर्गा (महा-माया)** ही है। **शक्ति-दर्शन** और **शक्ति-सूक्तों** में भी यही बात कही है, देखिए–'**चितिः स्वतन्त्रा विश्व-सिद्धि-हेतुः।**' अर्थात् वह **चेतना-स्वतन्त्र** है और **विश्व-निर्माण का कारण** है।

'**श्रीदुर्गा**' के मन्त्र-माहात्म्य से भी हमको हमारे **गुरु-देव** ने यही बात समझाई है कि **निर्गुण** और **स-गुण** दोनों **ब्रह्म-तत्त्वों** का प्रकाश **शक्ति-मन्त्र** से ही होता है। **निर्गुण ब्रह्म** का प्रकाश देखना है, तो '**गायत्री मन्त्र**' है। वह **शक्ति-मन्त्र** ही है और '**सगुण ब्रह्म**' का प्रकाश (रूप) देखना है, तो **दुर्गा (महा-माया)** का मन्त्र **नवार्ण मन्त्र** है। दोनों ही **शक्ति-मन्त्र** हैं।

भगवती दुर्गा ने स्वयं श्री-मुख से **गीतोपदेश** करते समय **हिमालय** को सम्बोधित करते हुए अर्थात् **हिमालय को उपदेश** के बहाने से सभी देवों को, जो उस समय उपासना के लिए आए थे, समझाया है कि 'मैं **दो भागवाली** हूँ। मेरा एक भाग **पर** और दूसरा **अपर** भाग कहलाता है। **पर-भाग–निर्गुण ब्रह्म, शुद्ध संवित्** है और **अपर भाग–माया-सम्वलित सगुण ब्रह्म** है।' देखिए '**देवी भागवत**' में **(भगवती-गीता)** सप्तम स्कन्ध–'**भाग-द्वय-वती यस्मात्, सृजामि सकल्पं जगत्।**'

भगवती दुर्गा का मुख्य मन्त्र **नवार्ण मन्त्र** है। इसमें भी **ब्रह्म-स्वरूप का सच्चिदानन्द-मय** वर्णन मिलता है। जैसे देखिए **सत् -चित् -आनन्द-मय** होने से **ब्रह्म त्रि-भागात्मक** है और ये ही तीन भाग आश्रयाश्रयि भाव से **शक्ति-ब्रह्म (दुर्गा)** के हैं। इनका वर्णन **नवार्ण मन्त्र** में यों है–पहले बीज **(ऐं)** से **चिद् -रूपा सरस्वती** का सम्बोधन समझाया है क्योंकि ज्ञान से अज्ञान दूर किया जाता है। इस कारण उक्त बीज का अर्थ–'**निर्धूत-निखिलध्वान्ते**'–किया है। दूसरे बीज **(ह्रीं)** से **सद् -रूपिणी महा-लक्ष्मी** को सम्बोधन किया है। '**ब्रह्म**' नित्य और त्रिकालाबाध्य है अर्थात् कल्पित वियदादि (आकाशादि) प्रपञ्च-निवास का अधिष्ठान है। इस कारण–'**नित्य-मुक्ते सदात्मिके**'–ऐसा दूसरे बीज का विवरण मिलता है। ऐसे ही परम उत्कृष्ट '**आनन्द**' ही परम पुरुषार्थ है, **आनन्द-रूप** ही **ब्रह्म** है। '**श्रुति**' कहती है–'**आत्मनः कामाय सर्वं प्रियं भवति**'।

'**आनन्द**'–**सर्वानुभव-वेद्य** होता है। इसमें यही उत्कर्ष होता है कि यह '**आनन्द**' स्वयं तो '**आनन्द**' है ही, परन्तु औरों के भी आनन्दार्थ ही होता है। इस कारण '**आनन्द**' ही सर्व-शेष है। यह '**आनन्द**' मानुषानन्द से लेकर शत-सहस्र-गुणाधिक '**श्रुति**' में बहु भाँति वर्णित है। उन सबमें परमातिशायी '**ब्रह्मानन्द**' है। इस कारण **आनन्द-प्रधान महाकाली-स्वरूप** का तीसरे बीज **(क्लीं)** से सम्बोधन किया। फिर '**चामुण्डा**'-शब्द मोक्ष की कारण-भूत एक निर्विकल्पक वृत्ति-विशेष का बोधक है। उस वृत्ति-विशेष से तादर्थ्य में चतुर्थी विभक्ति लगाई है। यहाँ कितने ही आचार्य तो **अखण्ड ब्रह्म-विद्या** ही '**चामुण्डा**'-शब्द का अर्थ बतलाते हैं। उनके मत का यह रहस्य है कि **दुर्गा महा-शक्ति मूल प्रकृति महा-माया** है। वह **चण्ड-मुण्ड-बध** के कारण '**चामुण्डा**'-पद-सिद्ध हुई है। '**सप्तशती**' के अनुसार–'**मया तवात्रोपहृतौ, चण्ड-मुण्डौ महा-पशू।**'

यहाँ **'पशु'**-पद से मूलाविद्या (मूल अज्ञान) तूलाविद्या (तूल अज्ञान) लेकर ही **महा-शक्ति** को **महा-विद्या** कहा है। **वेदान्त-सिद्धान्त** में भी–**'अज्ञान-नाशन-विधौ, विद्यैव तु पटीयसी।'** इसके अनुसार **महा-माया** दोनों अविद्याओं को विलीन कर देती है। जैसा **'अथर्व-श्रुति** में कहा है–**'विद्याहमविद्याहमजाहमित्यादि।**

अब रहा **'विच्चे'**-पद। इसका भावार्थ यों समझने का है–**१. चित्, २. च, ३. ई**–ये तीन भाग इसके समझिए। तीनों पद **१. चित्, २. सत्** और **३. आनन्द** के वाचक हैं। जैसे अस्य स्त्री ई। स्त्री-लिङ्ग, में **'अकारान्त'**-शब्द **'ई'**-कारान्त हो जाते हैं, जैसे दास–दासी, देव–देवी आदि। **'अ'–ब्रह्म**, यह स्त्रीत्व-निर्देश में **'ई'** हुआ, उसके सम्बोधन में ह्रस्व **'इ'** हुआ, **हे इ** अर्थात् हे **ब्रह्म-रूपिणि** (आनन्द-ब्रह्म-महिषि), यह अर्थ होगा। **'वित्'**-पद तो **ज्ञान** का वाचक है ही। **'च-कार'** भी सत् अर्थ-वाचक है। अब उक्त तीनों बीजों के साथ इन तीनों पदार्थों की योजना से यह संगृहीत होता है–**हे चिद्-रूपिणि महा-सरस्वति** और **सद्-रूपिणि महा-लक्ष्मि** और **हे आनन्द-रूपिणि महा-कालि!** आपके तत्त्व-ज्ञान-सिद्धि के लिए हम हृदय-कमल में आपका ध्यान करते हैं।

उक्त अर्थ-भावार्थ को विचार लेने से **दुर्गा–ब्रह्म-शक्ति आदि-माया** स्पष्टतः जान पड़ती हैं। **'दुर्गा'** ही **'ब्रह्म'** की प्रतिपाद्य देवता है। यही **मुक्ति** का कारण है। यही **भोग-सुख-सम्पत्** देती हैं–

ऐश्वर्यं यत्-प्रसादेन, सौभाग्यारोग्य-सम्पदः।
शत्रु-हानिः परो मोक्षः, स्तूयते सा न किं जनैः।।

अर्थात् जिसके प्रसाद (कृपा) से **ऐश्वर्य, सौभाग्य, आरोग्य, सम्पदाएँ, विजय** और **मोक्ष** तक मिलता है, उस **सर्वाराध्या भगवती दुर्गा** की स्तुति कौन नहीं करता? सभी करते हैं।

देवी भागवत में लिखा है कि जो **दुर्गा** का **आराधन** करता है (पूजता है, स्मरण करता), वह सभी प्रकार की सिद्धियाँ पाता है और आगे कोई विपत् नहीं आती। यही **बुद्धि-तत्त्व की अधिष्ठात्री** है और यही **अन्तर्यामि-स्वरूपिणी** है।

सर्व-बुद्ध्यधिदेवीयमन्तर्यामि-स्वरूपिणी। दुर्ग-सङ्कट-हर्त्रीति, देवी दुर्गेति कीर्त्यते।।

'दुर्गा'–सभी **शाक्त-शैव-वैष्णव**-मार्गियों के द्वारा आराधनीय है। इसे कौन-कौन पूजते-ध्याते हैं, यह भी देख लीजिए–

सर्वे देवा हरि - ब्रह्म, प्रमुखा मनवस्तथा।
मुनयो ज्ञान - निष्ठाश्च, योगिनश्चाश्रमास्तथा।।

***

श्रीदुर्गा आपदुद्धार-स्तोत्रम्

नमस्ते शरण्ये शिवे सानुकम्पे, नमस्ते जगद्-व्यापिके विश्व-रूपे!
नमस्ते जगद्-वन्द्य-पादारविन्दे, नमस्ते जगत्-तारिणि! त्राहि दुर्गे!।।१।।

हे शरण की देनेवाली, दया से युक्त शिवे! तुम्हें नमस्कार है। हे संसार में व्याप्त संसार-रूपिणि! तुम्हें नमस्कार है। हे संसार के पूज्य चरण-कमलवाली! तुम्हें नमस्कार है। हे संसार से मुक्त करनेवाली दुर्गे! मेरी रक्षा करो।।१।।

नमस्ते जगच्चिन्त्यमान-स्वरूपे, नमस्ते महा-योगिनि ज्ञान-रूपे!
नमस्ते नमस्ते सदानन्द-रूपे, नमस्ते जगत्-तारिणि! त्राहि दुर्गे!।।२।।

हे संसार द्वारा स्मरण किए जानेवाले स्वरूपवाली! तुम्हें नमस्कार है। हे ज्ञान-रूपा महा-योगिनी! तुम्हें नमस्कार है। हे सदैव आनन्द-मय-रूपवाली! तुम्हें नमस्कार है। हे संसार से मुक्त करनेवाली दुर्गे! मेरी रक्षा करो।।२।।

अनाथस्य दीनस्य तृष्णातुरस्य, भयार्तस्य भीतस्य बद्धस्य जन्तोः।
त्वमेका गतिर्देवि! निस्तार-कर्त्री, नमस्ते जगत्-तारिणि! त्राहि दुर्गे!।।३।।

हे देवि! अनाथ की, दीन की, प्यास से व्याकुल की, डर से घबराए हुए की, डरे हुए की, बँधे हुए प्राणी की एक-मात्र छुटकारा करानेवाली पहुँच तुम्हीं हो। हे संसार से मुक्त करनेवाली दुर्गे! मेरी रक्षा करो।।३।।

अरण्ये रणे दारुणे शत्रु-मध्येऽनले सागरे प्रान्तरे राज-गेहे।
त्वमेका गतिर्देवि! निस्तार-नौका, नमस्ते जगत्-तारिणि! त्राहि दुर्गे!।।४।।

हे देवि! घोर जङ्गल में, युद्ध में, शत्रुओं के बीच में, अग्नि में, समुद्र में, वन में, राज-दरबार में तुम्हीं पार लगानेवाली नौका के समान एक-मात्र शरण-दात्री हो। हे संसार से मुक्त करनेवाली दुर्गे! मेरी रक्षा करो।।४।।

अपारे महा-दुस्तरेऽत्यन्त-घोरे, विपत्-सागरे मज्जतां देह-भाजाम्।
त्वमेका गतिर्देवि! निस्तार-नौका, नमस्ते जगत्-तारिणि! त्राहि दुर्गे!।।५।।

हे देवि! असीम और अत्यन्त कठिन तथा बहुत ही भयानक सङ्कट-रूपी समुद्र में डूबते हुए प्राणियों की मुक्ति की कारण-रूपा एक-मात्र तुम्हीं हो। हे संसार से मुक्त करनेवाली दुर्गे! मेरी रक्षा करो।।५।।

नमश्चण्डिके! चण्ड-दुर्दण्ड-लीला, समुत्खण्डिता खण्डिताऽशेष-शत्रो!
त्वमेका गतिर्देवि! निस्तार-बीजम्, नमस्ते जगत्-तारिणि! त्राहि दुर्गे!।।६।।

हे चण्ड राक्षस की भयानक माया को नष्ट कर शत्रुओं का पूर्णतः विनाश करनेवाली चण्डिके! तुम्हें नमस्कार है। हे देवि! मुक्ति की कारण-रूपा शरण एक-मात्र तुम्हीं हो। हे संसार से मुक्त करनेवाली दुर्गे! मेरी रक्षा करो।।६।।

त्वमेवाद्य-भावा धृता सत्य-वादी:, न जाताऽजिता क्रोधनात् क्रोध-निष्ठा।
इडा पिङ्गला त्वं सुषुम्ना च नाडी, नमस्ते जगत्-तारिणि! त्राहि दुर्गे!।।७।।

तुम्हीं भावों की जननी, धीरता, सत्य-वादिता हो। तुम अजन्मा और अजेया हो। रुष्ट करने से ही क्रुद्धा होती हो। तुम्हीं इडा, पिङ्गला और सुषुम्ना नाड़ी हो। हे संसार से मुक्त करनेवाली दुर्गे! मेरी रक्षा करो।।७।।

नमो देवि दुर्गे! शिवे! भीम-नादे!, सरस्वत्यरुन्धत्यमोघ-स्वरूपे!।
विभूति: शची काल-रात्रि: सती त्वं, नमस्ते जगत्-तारिणि! त्राहि दुर्गे!।।८।।

हे घोर ध्वनि करनेवाली शिवे, हे दुर्गे! तुम्हें नमस्कार है। हे सरस्वती-अरुन्धती के अमोघ-स्वरूपवाली! तुम्हीं विभूति, इन्द्राणी, काल-रात्रि और सती हो। हे संसार से मुक्त करनेवाली दुर्गे! मेरी रक्षा करो।।८।।

शरणमसि सुराणां सिद्ध-विद्याधराणाम्, मुनि-मनुज-पशूनां दस्युभिस्त्रासितानाम्।
नृपति-गृह-गतानां व्याधिभि: पीडितानाम्, त्वमसि शरणमेका देवि दुर्गे! प्रसीद।।९।।

हे देवि! तुम देवताओं की, सिद्धों-विद्याधरों की, ऋषियों-मनुष्यों-पशुओं की, चोर-डाकुओं द्वारा पीड़ितों की, राज-दरबार में गए हुए लोगों की, रोगों से दु:खी जनों की एक-मात्र शरण हो। हे दुर्गे! तुम प्रसन्न होओ।।९।।

॥फल-श्रुति॥

इदं स्तोत्रं मया प्रोक्तमापदुद्धार-हेतुकम्।
त्रि-सन्ध्यमेक-सन्ध्यं वा, पठनाद् घोर-सङ्कटात्।।१।।
मुच्यते नात्र सन्देहो, भुवि स्वर्गे रसातले।
सर्वं वा श्लोकमेकं वा, य: पठेद् भक्ति-मान् सदा।।२।।
स सर्वं दुष्कृतं त्यक्त्वा, प्राप्नोति परमं पदम्।
पठनादस्य देवेशि! किं न सिद्ध्यति भू-तले।
स्तव-राजमिदं देवेशि! संक्षेपात् कथितं मया।।३।।

आपत्तियों से छुटकारा दिलानेवाला यह स्तोत्र मैंने कहा है। तीनों सन्ध्याओं में अथवा एक ही सन्ध्या में इसका पाठ करने से कठिन सङ्कट से वह सभी पापों से मुक्त होकर परम पद को प्राप्त करता है। हे देवेशि! इसके पाठ से पृथ्वी पर क्या सिद्ध नहीं होता? अर्थात् सभी कामनाएँ पूर्ण होती हैं। हे देवि! मैंने संक्षेप में इस स्तव-राज को कहा है।

।।श्रीसिद्धेश्वरी-तन्त्रे श्रीदुर्गा-आपदुद्धार-स्तोत्रम्।।

***

श्रीदुर्गा-स्तवः

॥पूर्व-पीठिका॥

॥श्रीवैशम्पायन उवाच॥

आर्या-स्तवं प्रवक्ष्यामि, यथोक्तमृषिभिः पुरा।
नारायणीं नमस्यामि, देवीं त्रि-भुवनेश्वरीम्॥१॥

श्रीवैशम्पायन ने कहा—प्राचीन काल में ऋषियों ने जैसा बताया है, वैसा ही आर्या-स्तव कहूँगा। तीनों लोकों की ईश्वरी नारायणी देवी को मैं नमस्कार करता हूँ॥१

मूल-पाठ

त्वं हि सिद्धिर्धृतिर्मेधा, श्रीर्विद्या सन्नतिर्मतिः।
सन्ध्या रात्रिः प्रभा निद्रा, काल-रात्रिस्तथैव च॥१॥

तुम्हीं सिद्धि, धृति, मेधा, श्री, विद्या, सन्नति, मति, सन्ध्या, रात्रि, प्रभा, निद्रा और काल-रात्रि हो॥१

आर्या कात्यायनी देवी, कौशिकी ब्रह्म-चारिणी।
जननी सिद्ध-सेनानी, उग्र-चारी महा-तपा॥२॥
जया च विजया चैव, पुष्टिश्च त्वं क्षमा दया।
ज्येष्ठा यमस्य भगिनी, नील-कौशेय-वासिनी॥३॥

आर्या, कात्यायनी, कौशिकी, ब्रह्म-चारिणी, जननी, सिद्ध-सेनानी, उग्र-चारी, महा-तपा, जया, विजया, पुष्टि, क्षमा, दया, ज्येष्ठा, यम-भगिनी और नील-कौशेय-वासिनी तुम हो॥२-३

बहु-रूपा विरूपा च, अनेक-विध-चारिणी।
विरूपाक्षी विशालाक्षी, भक्तानां परि-रक्षिणी॥४॥

विविध प्रकार के व्यवहार करनेवाली बहु-रूपा और विरूपा हो। तुम विरूपाक्षी, विशालाक्षी और भक्तों की रक्षा करनेवाली हो॥४

पर्वताग्रेषु घोरेषु, नदीषु च गृहेषु च।
वासस्तव महा-देवि!, वनेषूपवनेषु च॥५॥

हे महा-देवि! तुम्हारा निवास घोर पर्वतों की चोटी पर, नदियों में, गृहों में, वनों में और उपवनों में है॥५

शबरैर्बर्बरैश्चैव, पुलिन्दैरभि-पूजिता।
मयूर-पक्ष-ध्वजिनी, लोकान् क्रमसि सर्वशः।।६।।

शर्बरों, बर्बरों और पुलिन्दों के द्वारा पूजिता हो, **मयूर-पङ्ख की ध्वजावाली** तुम सम्पूर्ण संसार को सब प्रकार से सञ्चालित करती हो।।६

कुक्कुटैश्छागलैर्मेषैः, सिहैर्व्याघ्रैः समाकुला।
घण्टा-निनाद-बहुला, विश्रुता विन्ध्य-वासिनी।।७।।

मुर्गों, बकरों, भेड़ों, सिंहों, व्याघ्रों से घिरी हुई हो। **घण्टा की ध्वनि से युक्त** विन्ध्याचल में निवास करनेवाली प्रसिद्ध हो।।७

त्रिशूली पट्टिशी चैव, सूर्य-चन्द्र-पताकिनी।
नवमी कृष्ण-पक्षस्य, शुक्लस्यैकादशी तथा।।८।।

त्रिशूल, पट्टिश और सूर्य-चन्द्र की पताकावाली हो। **कृष्ण-पक्ष की नवमी** और **शुक्ल-पक्ष की एकादशी** तुम हो।।८

भगिनी बलदेवस्य, रजनी कलह-प्रिया।
आवासः सर्व-भूतानां, निष्ठा च परमा गतिः।।९।।

बलदेव की बहन, रजनी और **कलह-प्रिया** हो। **सब जीवों की आधार** हो और निष्ठा तथा **परम गति (मोक्ष)** की देनेवाली हो।।९

नन्द-गोप-सुता चैव, देवानां विजयावहा।
चीर-वासाः सु-वासाश्च, रात्रिः सन्ध्या त्वमेव च।।१०।।

नन्द-पुत्री और **देवताओं की विजय करनेवाली** हो। सुन्दर वस्त्र धारण करनेवाली, रात्रि और **सन्ध्या** तुम्हीं हो।।१०

प्रकीर्ण-केशी मृत्युश्च, तथा मांसौदन-प्रिया।
लक्ष्मीरलक्ष्मी-रूपेण, दानवानां वधाय च।।११।।

खुले हुए बालोंवाली, मृत्यु-स्वरूपा और मांस-प्रिया हो। **लक्ष्मी और अलक्ष्मी** रूप से तथा **राक्षसों का बध** करने के लिए तुम्हीं हो।।११

सावित्री चैव वेदानां, माता मन्त्र-गणस्य च।
अन्तर्वेदी च यज्ञानामृत्विजां चैव दक्षिणा।।१२।।

वेदों और मन्त्रों की माता **सावित्री** तुम हो। यज्ञों की **अन्तर्वेदी** और **ऋत्विजों** (हवन करानेवाले ब्राह्मणों) की **दक्षिणा** तुम्हीं हो।।१२

सिद्धि: सयान्त्रिकाणां तु, वेला त्वं सागरस्य च।
यक्षाणां प्रथमा यक्षी, नागानां सुरसेति च।।१३।।

नाविकों की सफलता और सागर का तट तुम्हीं हो। यक्षों की सर्व-प्रथम **यक्षिणी** और नागों की **सुरसा** तुम्हीं हो।।१३

कन्यानां ब्रह्म-चर्या त्वं, सौभाग्यं प्रमदासु च।
ब्रह्म-चारिण्यथो दीक्षा, शोभा च परमा तथा।।१४।।

कन्याओं की **ब्रह्म-चर्या**, स्त्रियों में **सौभाग्य-स्वरूपा**, ब्रह्मचारियों में **दीक्षा** और **परम शोभा-रूपा** तुम्हीं हो।।१४

ज्योतिषां त्वं प्रभा देवी, नक्षत्राणां च रोहिणी।
राज-द्वारेषु तीर्थेषु, नदीनां सङ्गमेषु च।।१५।।

ज्योतियों में **प्रभा** और नक्षत्रों में तुम **रोहिणी** हो। राज-द्वारों में, तीर्थों में, नदियों के सङ्गमों में तुम्हीं हो।।१५

पूर्णा च पूर्णिमा चन्द्रे, कृत्ति-वासा इति स्मृता।
सरस्वती च वाल्मीके:, स्मृतिर्द्वैपायनेस्तथा।।१६।।

पूर्णिमा के चन्द्रमा में **पूर्णता** और **कृत्ति-वासा** तुम्हीं कही गई हो। **वाल्मीकि** की **सरस्वती** और **द्वैपायन** की **स्मृति** तुम्हीं हो।।१६

कर्षकाणां च सीतेति, भूतानां धरणी तथा।
ऋषीणां धर्म-बुद्धिस्तु, देवानां मानसी तथा।।१७।।

किसानों की **सीता** और जीवों की धारण करनेवाली **पृथ्वी**, **ऋषियों** की **धर्म-बुद्धि** और **देवताओं** की **मानसी** तुम्हीं हो।।१७

सुर-देवीति भूतेषु, स्तूयसे त्वं स्व-कर्मभि:।
इन्द्रस्य चारु-दृष्टिस्त्वं, सहस्र-नयनेति च।
तापसानां च देवी त्वमरणिश्चाग्नि-होत्रिणाम्।।१८।।

अपने कामों के द्वारा तुम प्राणियों में **सुरा-देवी** के नाम से प्रार्थित हो। **इन्द्र की सुन्दर दृष्टि** और **सहस्र-नयना** तुम्हीं हो! **तपस्वियों की देवी** और **अग्नि-होत्रियों की अरणि** तुम्हीं हो।।१८

क्षुधा च सर्व-भूतानां, तृप्तिस्त्वं दैवतेषु च।
स्वाहा तृप्तिर्धृतिर्मेधा, वसूनां त्वं वसु-मती।।१९।।

सब प्राणियों की **भूख** और देवताओं में **तृप्ति-रूपा** तुम्हीं हो। **स्वाहा, तृप्ति, धृति, मेधा** और वसुओं की **वसु-मती** तुम्हीं हो।।१९

आशा च मानुषाणां तु, तुष्टिश्च कृत-कर्मणाम्।
दिशश्च विदिशश्चैव, तथा ह्यग्नि-शिखा प्रभा।।२०।।

मनुष्यों की **आशा**, कृत-कार्य लोगों की **सन्तुष्टि**, **दिशा-विदिशा** और **अग्नि-शिखा** की **प्रभा-रूपा** तुम्हीं हो।।२०

शकुनी पूतना च त्वं, रेवती वसु-दारुणा।
निद्रा च सर्व-भूतानां, मोहिनी क्षत्रिया तथा।।२१।।

शकुनी, **पूतना**, **रेवती**, **वसु-दारुणा**, सब प्राणियों की **निद्रा**, **मोहिनी** और **क्षत्रिया** तुम्हीं हो।।२१

विद्यानां ब्रह्म-विद्या च, त्वमोङ्कारो वषट् तथा।
नारीणां पार्वती च त्वं, पौराणीमृषयो विदुः।।२२।।

विद्याओं में **ब्रह्म-विद्या**, **ॐकार** और **वषट्** तुम्हीं हो। स्त्रियों में **पार्वती** हो और ऋषियों ने तुम्हें **पौराणी** कहा है।।२२

अरुन्धत्येक-भर्तृणां, प्रजा-पति-वचो यथा।
पर्याय-नामाभिर्दिव्यैरिन्द्राणी चेति विश्रुता।।२३।।

जैसा **प्रजा-पति** का वचन है, तुम पतिव्रताओं में **अरुन्धती** हो। पर्याय-वाची दिव्य नामों से तुम **इन्द्राणी** कही गई हो।।२३

त्वया व्याप्तमिदं सर्वं, जगत्-स्थावर-जङ्गमम्।
संग्रामेषु च सर्वेषु, अग्नि-प्रज्वलितेषु च।।२४।।
नदी-तीरेषु चौरेषु, कान्तारेषु भयेषु च।
प्रवासे राज-बन्धे च, शत्रूणां च प्रमर्दने।।२५।।
प्राणाद्येषु च सर्वेषु, त्वं हि रक्षा न संशयः।
त्वयि मे हृदयं देवि!, त्वयि चित्तं मनस्त्वयि।
रक्ष मां सर्व-पापेभ्यः, प्रसादं कर्तुमर्हसि।।२६।।

यह स्थावर-जङ्गम सारा संसार तुमसे ही व्याप्त है। युद्धों में, अग्नि-सङ्कट में, नदी के किनारे, चोरों के बीच, वनों में, भयों में, विदेश में, राज-बन्धन में और शत्रुओं के संहार में, सभी प्राण-सङ्कटों में तुम निस्सन्देह **रक्षा-रूपा** हो। हे देवि! तुममें मेरा मन, हृदय और चित्त लगा है। सब पापों से मेरी रक्षा करो। मुझ पर प्रसन्न होओ।।२४-२६

।।फल-श्रुति।।

इमं तव स्तवं दिव्यमिति व्यास-प्रकल्पितम्।

यः पठेत् प्रातरुत्थाय, शुचिः प्रयत-मानसः।
त्रिभिर्मासैः कांक्षितं च, फलं वै सम्प्रयच्छति।।१।।

व्यास-देव द्वारा रचित यह तुम्हारा **दिव्य-स्तोत्र** है। जो सवेरे उठकर पवित्र हो इसे ध्यान लगाकर पढ़ता है, उसे तीन महीनों में वाञ्छित फल प्रदान करती हो।।१

षड्भिर्मासैर्वरिष्ठं तु, वरमेकं प्रयच्छति।
अर्चिता नवभिर्मासैर्दिव्यं चक्षुः प्रयच्छति।।२।।

छः महीनों में एक श्रेष्ठ वर देती हो। नौ महीनों तक पूजा करने से दिव्य दृष्टि प्रदान करती हो।।२

संवत्सरेण सिद्धिं तु, यथा-कामं प्रयच्छति।
सत्यं ब्रह्म च दैवं च, द्वैपायन-वचो यथा।।३।।

एक वर्ष में यथेष्ट सिद्धि देती हो। **द्वैपायन** का जैसा वचन है, यह बात सर्वथा सत्य है।।३

नृणां बन्धं वधं घोरं, पुत्र-नाशं धन-क्षयम्।
व्याधिं मृत्यु-भयं चैव, पूजिता शमयिष्यसि।।४।।

मनुष्यों के बन्धन, वध, पुत्र-नाश, धन-नाश, रोग और मृत्यु-भय को तुम पूजित होने पर शान्त करती हो।।४

भविष्यसि महा-भागे !, वरदा काम-रूपिणी।
मोहयित्वा च तं कंसमेका त्वं भोक्ष्यसे जगत्।।५।।

हे महा-भागे ! अभीष्ट वर-दायिनी होकर तुम उस **कंस** (दुष्ट-भाव) को मुग्ध कर संसार का भोग करोगी।।५

अहमप्यात्मनो वृत्तिं, विद्यास्ये गोषु गोप-वत्।
स्व-वृद्ध्यर्थमहं चैव, करिष्ये कंस-गोपताम्।।६।।

मैं भी अपने को **कंस-कालीन गोपों** के समान गायों के बीच प्रवृत्त करूँगा। अपनी समृद्धि के लिए मैं **(कृष्णानुयायी)** गोप-वत् आचरण करूँगा।।६

एवं तु स समादिश्य, गतोऽन्तर्धानमीश्वरः।
सा चापि तं नमस्कृत्य, तथाऽस्त्विति विनिश्चिता।।७।।

ऐसा आदेश कर **ईश्वर** अन्तर्धान हो गए। उसने भी उन्हें नमस्कार कर **'एवमस्तु'** अर्थात् **'ऐसा ही हो'** कहा और अन्तर्धान हो गई।।७

।। श्रीदुर्गा-स्तवः ।।

***

दकारादि

श्रीदुर्गा द्वा-त्रिंशन्नामावली

दुर्गा[१] दुर्गार्ति - शमनी[२], दुर्गाऽऽपद् - विनिवारिणी[३]।
दुर्गमच्छेदिनी[४] दुर्ग - साधिनी[५] दुर्ग - नाशिनी[६]।।१।।

दुर्गतोद्धारिणी[७] दुर्ग - निहन्त्री[८] दुर्गमापहा[९]।
दुर्गम - ज्ञानदा[१०] दुर्ग - दैत्य - लोक - दवानला[११]।।२।।

दुर्गमा[१२] दुर्गमालोका[१३], दुर्गमाऽऽत्म - स्वरूपिणी[१४]।
दुर्ग - मार्ग - प्रदा[१५] दुर्गम - विद्या[१६] दुर्गमाश्रिता[१७]।।३।।

दुर्गम - ज्ञान - संस्थाना[१८], दुर्गम - ध्यान - भासिनी[१९]।
दुर्ग - मोहा[२०] दुर्गमगा[२१], दुर्गमार्थ - स्वरूपिणी[२२]।।४।।
दुर्गमासुर - संहन्त्री[२३], दुर्गमायुध - धारिणी[२४]।

दुर्गमाङ्गी[२५] दुर्गमता[२६], दुर्गम्या[२७] दुर्गमेश्वरी[२८]।
दुर्ग - भीमा[२९] दुर्ग - भामा[३०], दुर्गभा[३१] दुर्ग - दारिणी[३२]।।५।।

।।फल-श्रुति।।

नामावलिमिमां यस्तु, दुर्गायाः सुधी मानवः।
पठेत् सर्व - भयान्मुक्तो, भविष्यति न संशयः।।
शत्रुभिः पीड्यमानो वा, दुर्ग-बन्ध-गतोऽपि वा।
द्वा - त्रिंशन्नाम - पाठेन, मुच्यते नात्र संशयः।।

अर्थात् जो **भगवती श्रीदुर्गा के उक्त ३२ नामों का श्रद्धा-पूर्वक 'पाठ'** करता है, वह सभी प्रकार के भयों से मुक्त हो जाता है।

***

श्रीदुर्गा-सहस्त्र-नाम-स्तोत्रम्

पूर्व-पीठिका

।।श्रीशिव उवाच।।

शृणु देवि! प्रवक्ष्यामि, दुर्गा-नाम-सहस्त्रकम्।
यत्-प्रसादान्महा-देवि!, चतुर्वर्ग-फलं लभेत्।।१।।

श्री शिव ने कहा—हे देवि! सुनो, भगवती दुर्गा के सहस्त्र-नाम स्तोत्र को कहूँगा, जिसके प्रसाद से हे महा-देवि! धर्म-अर्थ-काम-मोक्षात्मक चारों वर्गों का फल साधक प्राप्त करता है।।१

पठनं श्रवणं चास्य, सर्वाशा-परि-पूरकम्।
धन-पुत्र-प्रदं चैव, बालानां शान्ति-कारकम्।।२।।

इसका पाठ करने से और इसे सुनने से सभी इच्छाओं की पूर्ति होती है। यह धन और पुत्र को देनेवाला तथा बालक के कष्टों को शान्त करनेवाला है।।२

उग्र-रोग-प्रशमनं, ग्रह-दोष-विनाशनम्।
अकाल-मृत्यु-हरणं, वाणिज्ये विजय-प्रदम्।।३।।

कठिन रोग को यह शान्त करता है, ग्रहों के दोषों को नष्ट करता है, अकाल-मृत्यु को दूर करता है और व्यापार में सफलता प्रदान करता है।।३

विवादे दुर्गमे युद्धे, नौकायां शत्रु-सङ्कटे।
राज-द्वारे महाऽरण्ये, सर्वत्र विजय-प्रदम्।।४।।

झगड़े में, कठिन युद्ध में, नौका में, शत्रु का भय होने पर, राज-दरबार में, घोर जङ्गल में-सभी स्थानों में यह विजय का दिलानेवाला है।।४

।।विनियोग।।

ॐ अस्य श्रीदुर्गा-सहस्त्र-नाम-माला-मन्त्रस्य श्रीनारद ऋषिः, गायत्री छन्दः, श्रीदुर्गा देवता, दुं वीजं, ह्रीं शक्तिः, ॐ कीलकं, श्रीदुर्गा-प्रीत्यर्थं श्रीदुर्गा-सहस्त्र-नाम-पाठे विनियोगः।

।।ऋष्यादि-न्यास।।

श्रीनारद-ऋषये नमः शिरसि। गायत्री-छन्दसे नमः मुखे। श्रीदुर्गा-देवतायै नमः हृदये। दुं बीजाय नमः गुह्ये। ह्रीं शक्तये नमः पादयोः। ॐ कीलकाय नमः नाभौ। श्रीदुर्गा-प्रीत्यर्थं श्रीदुर्गा-सहस्त्र-नाम-पाठे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे।

	कर-न्यास	अङ्ग-न्यासः
ह्रां- 'ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै'	अंगुष्ठाभ्यां नमः	हृदयाय नमः
ह्रीं- 'ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै'	तर्जनीभ्यां स्वाहा	शिरसे स्वाहा
ह्रूं- 'ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै'	मध्यमाभ्यां वषट्	शिखायै वषट्
ह्रैं- 'ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै'	अनामिकाभ्यां हुम्	कवचाय हुम्
ह्रौं- 'ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै'	कनिष्ठाभ्यां वौषट्	नेत्र-त्रयाय वौषट्
ह्रः- 'ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै'	करतल-करपृष्ठाभ्यां फट्	अस्त्राय फट्

।। ध्यान।।

सिंहस्था शशि-शेखरा मरकत-प्रख्या चतुर्भिर्भुजैः,
शङ्ख-चक्र-धनुः-शरांश्च दधती नेत्रैस्त्रिभिः शोभिता।।
आमुक्ताङ्गद-हार-कङ्कण-रणत्-काञ्ची-क्वणन्-नूपुरा।
दुर्गा दुर्गति-हारिणी भवतु वो रत्नोल्लसत्-कुण्डला।।

।। मानस-पूजन।।

लं पृथिव्यात्मकं गन्धं समर्पयामि (अधो-मुख कनिष्ठा एवं अंगुष्ठ से)।
हं आकाशात्मकं पुष्पं समर्पयामि (अधो-मुख अंगुष्ठ एवं तर्जनी से)।
यं वाय्वात्मकं धूपं समर्पयामि (ऊर्ध्व-मुख तर्जनी एवं अंगुष्ठ से)।
रं वह्न्यात्मकं दीपं दर्शयामि (ऊर्ध्व-मुख मध्यमा एवं अंगुष्ठ से)।
वं अमृतात्मकं नैवेद्यं निवेदयामि (ऊर्ध्व-मुख अनामिका एवं अंगुष्ठ से)।
सं सर्वात्मकं ताम्बूलं निवेदयामि (ऊर्ध्व-मुख सर्वांगुलियों से)।

।।मूल-पाठ।।

श्रीदुर्गा[१] दुर्गति - हरा[२], परिपूर्णा[३] परात्परा[४]।
सर्वोपाधि - विनिर्मुक्ता[५], भव - भार - विनाशिनी[६]।।०१।।
कार्य - कारण - निर्मुक्ता[७], लीला - विग्रह - धारिणी[८]।
सर्व - शृङ्गार - शोभाढ्या[९], सर्वायुध - समन्विता[१०]।।०२।।
सूर्य - कोटि - सहस्राभा[११], चन्द्र - कोटि - निभानना[१२]।
गणेश - कोटि - लावण्या[१३], विष्णु - कोट्यरि - मर्दिनी[१४]।।०३।।
दावाग्नि - कोटि - नलिनी[१५], रुद्र - कोट्युग्र - रूपिणी[१६]।
समुद्र - कोटि - गम्भीरा[१७], वायु - कोटि - महा - बला[१८]।।०४।।

आकाश - कोटि - विस्तारा[१९], यम - कोटि - भयङ्करी[२०]।
मेरु - कोटि - समुच्छ्राया[२१], गण - कोटि - समृद्धिदा[२२]॥०५॥
नमस्या[२३] प्रथमा[२४] पूज्या[२५], सकला[२६] अखिलाम्बिका[२७]।
महा - प्रकृति[२८] सर्वात्मा[२९], भुक्ति - मुक्ति - प्रदायिनी[३०]॥०६॥
अजन्या[३१] जननी[३२] जन्या[३३], महा - वृषभ - वाहिनी[३४]।
कर्दमी[३५] काश्यपी[३६] पद्मा[३७], सर्व - तीर्थ - निवासिनी[३८]॥०७॥
भीमेश्वरी[३९] भीम - नादा[४०], भव - सागर - तारिणी[४१]।
सर्व - देव - शिरो - रत्न - निघृष्ट - चरणाम्बुजा[४२]॥०८॥
स्मरतां सर्व - पापघ्नी[४३], सर्व - कारण - कारणा[४४]।
सर्वार्थ - साधिका[४५] माता[४६], सर्व - मङ्गल - मङ्गला[४७]॥०९॥
पृच्छा[४८] पृश्नी[४९] महा - ज्योतिररण्या[५०-५१] वन - देवता[५२]।
भीतिर्भूतिर्मति:[५३-५५] शक्तिस्तुष्टि:[५६-५७] पुष्टिरुषा[५८-५९] धृति:[६०]॥१०॥
उत्तान - हस्ता[६१] सम्भूति:[६२], वृक्ष - वल्कल - धारिणी[६३]।
महा - प्रभा[६४] महा - चण्डी[६५], दीप्तास्या[६६] उग्र - लोचना[६७]॥११॥
महा - मेघ - प्रभा[६८] विद्या[६९], मुक्त - केशी[७०] दिगम्बरी[७१]।
हसन्मुखी[७२] साट्टहासा[७३], लोल - जिह्वा[७४] महेश्वरी[७५]॥१२॥
मुण्डाली[७६] अभया[७७] दक्षा[७८], महा - भीमा[७९] वरोद्यता[८०]।
खड्ग - मुण्ड - धरा[८१] मुक्ति:[८२], कुमुदाज्ञान - नाशिनी[८३-८४]॥१३॥
अम्बालिका[८५] महा - वीर्या[८६], सारदा[८७] कनकेश्वरी[८८]।
परमात्मा[८९] परा[९०] क्षिप्ता[९१], शूलिनी[९२] परमेश्वरी[९३]॥१४॥
महा - काल - समासक्ता[९४], शिव - शत - निनादिनी[९५]।
घोराङ्गी[९६] मुण्ड - मुकुटा[९७], श्मशानास्थि - कृताऽऽसना[९८]॥१५॥
महा - श्मशान - निलया[९९], मणि - मण्डप - मध्यगा[१००]।
पान - पात्र - धृता[१०१] खर्वा[१०२], पन्नगी[१०३] पर - देवता[१०४]॥१६॥

सुगन्धा[105] तारिणी[106] तारा[107], भवानी[108] वन - वासिनी[109]।
लम्बोदरी[110] महा - दीर्घा[111], जटिनी[112] चन्द्र - शेखरा[113] ॥१७॥
पराऽम्बा[114] परमाराध्या[115], परेशी[116] ब्रह्म - रूपिणी[117]।
देव-सेना[118] विश्व-गर्भा[119], अग्नि-जिह्वा[120] चतुर्भुजा[121] ॥१८॥
महा - दंष्ट्रा[122] महा - रात्रिः[123], नीला[124] नील - सरस्वती[125]।
दक्षजा[126] भारती[127] रम्भा[128], महा - मङ्गल - चण्डिका[129] ॥१९॥
रुद्रजा[130] कौशिकी[131] पूता[132], यम-घण्टा[133] महा - बला[134]।
कादम्बिनी[135] चिदानन्दा[136], क्षेत्रस्था[137] क्षेत्र - कर्षिणी[138] ॥२०॥
पञ्च - प्रेत - समारूढा[139], ललिता[140] त्वरिता[141] सती[142]।
भैरवी[143] रूप - सम्पन्ना[144], मदनानल - नाशिनी[145] ॥२१॥
जातापहारिणी[146] वार्त्ता[147], मातृका[148] अष्ट - मातृका[149]।
अनङ्ग - मेखला[150] षष्ठी[151], हृल्लेखा[152] पर्वतात्मजा[153] ॥२२॥
वसुन्धरा[154] धरा[155] धारा[156], विधात्री[157] विन्ध्य - वासिनी[158]।
अयोध्या[159] मथुरा[160] काञ्ची[161], महैश्वर्या[162] महोदरी[163] ॥२३॥
कोमला[164] मानदा[165] भव्या[166], मत्स्योदरी[167] महा - लया[168]।
पाशांकुश - धनुर्बाणा[169], लावण्याम्बुधि - चन्द्रिका[170] ॥२४॥
रक्त - वासा[171] रक्त - लिप्ता[172], रक्त - गन्ध - विनोदिनी[173]।
दुर्लभा[174] सुलभा[175] मत्स्या[176], माधवी[177] मण्डलेश्वरी[178] ॥२५॥
पार्वती[179] अमरी[180] अम्बा[181], महा - पातक - नाशिनी[182]।
नित्य - तृप्ता[183] निराभासा[184], अकुला[185] रोग - नाशिनी[186] ॥२६॥
कनकेशी[187] पञ्च - रूपा[188], नूपुरा[189] नील - वाहिनी[190]।
जगन्मयी[191] जगद्धात्री[192], अरुणा[193] वारुणी[194] जया[195] ॥२७॥
हिंगुला[196] कोटरा[197] सेना[198], कालिन्दी[199] सुर - पूजिता[200]।
रामेश्वरी[201] देव - गर्भा[202], त्रि - स्रोता[203] अखिलेश्वरी[204] ॥२८॥

ब्रह्माणी[२०५] वैष्णवी[२०६] रौद्री[२०७], महा - काल - मनोरमा[२०८]।
गारुडी[२०९] विमला[२१०] हंसी[२११], योगिनी[२१२] रति - सुन्दरी[२१३] ।।२९।।
कपालिनी[२१४] महा - चण्डा[२१५], विप्र - चित्ता[२१६] कुमारिका[२१७]।
ईशानी[२१८] ईश्वरी[२१९] ब्राह्मी[२२०], माहेशी[२२१] विश्व - मोहिनी[२२२] ।।३०।।
एक-वीरा[२२३] कुलानन्दा[२२४], काल - पुत्री[२२५] सदा - शिवा[२२६]।
शाकम्भरी[२२७] नील - वर्णा[२२८], महिषासुर - मर्दिनी[२२९] ।।३१।।
कामदा[२३०] कामिनी[२३१] कुल्ला[२३२], कुरु-कुल्ला[२३३] विरोधिनी[२३४]।
उग्रा[२३५] उग्र - प्रभा[२३६] दीप्ता[२३७], प्रभा[२३८] दंष्ट्रा[२३९] मनोजवा[२४०] ।।३२।।
कल्प - वृक्ष - तलासीना[२४१], श्रीनाथ - गुरु - पादुका[२४२]।
अव्याज - करुणा - मूर्त्तिरानन्द - घन - विग्रहा[२४३-४४] ।।३३।।
विश्व - रूपा[२४५] विश्व-माता[२४६], वज्रिणी[२४७] वज्र - विग्रहा[२४८]।
अनघा[२४९] शाङ्करी[२५०] दिव्या[२५१], पवित्रा[२५२] सर्व - साक्षिणी[२५३] ।।३४।।
धनुर्वाण - गदा - हस्ता[२५४], आयुधा[२५५] आयुधान्विता[२५६]।
लोकोत्तरा[२५७] पद्म - नेत्रा[२५८], योग - माया[२५९] जटेश्वरी[२६०] ।।३५।।
अनुच्चार्या[२६१] त्रिधा[२६२] दृप्ता[२६३], चिन्मयी[२६४] शिव - सुन्दरी[२६५]।
विश्वेश्वरी[२६६] महा - मेधा[२६७], उच्छिष्टा[२६८] विस्फुलिङ्गिनी[२६९] ।।३६।।
चिदम्बरी[२७०] चिदाकारा[२७१], अणिमा[२७२] नील - कुन्तला[२७३]।
दैत्येश्वरी[२७४] देव - माता[२७५], महा - देवी[२७६] कुश - प्रिया[२७७] ।।३७।।
सर्व - देव-मयी[२७८] पुष्टा[२७९], भूष्या[२८०] भूत-पति - प्रिया[२८१]।
महा - किरातिनी[२८२] साध्या[२८३], धर्मज्ञा[२८४] भीषणानना[२८५] ।।३८।।
उग्र - चण्डा[२८६] श्रीचाण्डाली[२८७], मोहिनी[२८८] चण्ड - विक्रमा[२८९]।
चिन्तनीया[२९०] महा - दीर्घा[२९१], अमृता[२९२] मृत - बान्धवी[२९३] ।।३९।।
पिनाक - धारिणी[२९४] शिप्रा[२९५], धात्री[२९६] त्रि - जगदीश्वरी[२९७]।
रक्तपा[२९८] रुधिराक्ताङ्गी[२९९], रक्त - खर्पर - धारिणी[३००] ।।४०।।

त्रिपुरा[३०१] त्रिकूटा[३०२] नित्या[३०३], श्रीनित्या[३०४] भुवनेश्वरी[३०५]।
हव्या[३०६] कव्या[३०७] लोक-गति:[३०८], गायत्री[३०९] परमा[३१०] गति:[३११] ।।४१।।
विश्व - धात्री[३१२] लोक - माता[३१३], पञ्चमी[३१४] पितृ - तृप्तिदा[३१५]।
कामेश्वरी[३१६] काम - रूपा[३१७], काम - बीजा[३१८] कलात्मिका[३१९] ।।४२।।
ताटङ्क - शोभिनी[३२०] वन्द्या[३२१], नित्य - क्लिन्ना[३२२] कुलेश्वरी[३२३]।
भुवनेशी[३२४] महा - राज्ञी[३२५], अक्षरा[३२६] अक्षरात्मिका[३२७] ।।४३।।
अनादि - बोधा[३२८] सर्वज्ञा[३२९], सर्वा[३३०] सर्व - तरा[३३१] शुभा[३३२]।
इच्छा-ज्ञान-क्रिया-शक्ति:[३३३-३५], सर्वाढ्या[३३६] शर्व-पूजिता[३३७] ।।४४।।
श्रीमहा - सुन्दरी[३३८] रम्या[३३९], राज्ञी[३४०] श्रीपरमाम्बिका[३४१]।
राज - राजेश्वरी[३४२] भद्रा[३४३], श्रीमत् - त्रिपुर - सुन्दरी[३४४] ।।४५।।
त्रि - सन्ध्या[३४५] इन्दिरा[३४६] ऐन्द्री[३४७], अजिता[३४८] अपराजिता[३४९]।
भेरुण्डा[३५०] दण्डिनी[३५१] घोरा[३५२], इन्द्राणी[३५३] च तपस्विनी[३५४] ।।४६।।
शैल - पुत्री[३५५] चण्ड - घण्टा[३५६], कूष्माण्डा[३५७] ब्रह्म - चारिणी[३५८]।
कात्यायनी[३५९] स्कन्द - माता[३६०], काल - रात्रि:[३६१] शुभङ्करी[३६२] ।।४७।।
महा-गौरा[३६३] सिद्धि-दात्री[३६४], नव-दुर्गा[३६५] नभ:-स्थिता[३६६]।
सुनन्दा[३६७] नन्दिनी[३६८] कृत्या[३६९], महा-भागा[३७०] महोज्ज्वला[३७१] ।।४८।।
महा - विद्या[३७२] ब्रह्म - विद्या[३७३], दामिनी[३७४] ताप - हारिणी[३७५]।
उत्थिता[३७६] उत्पला[३७७] बाध्या[३७८], प्रमोदा[३७९] शुभदोत्तमा[३८०] ।।४९।।
अतुल्या[३८१] अमूला[३८२] पूर्णा[३८३], हंसारूढा[३८४] हरि - प्रिया[३८५]।
सुलोचना[३८६] विरूपाक्षी[३८७], विद्युद् - गौरी[३८८] महार्हणा[३८९] ।।५०।।
काक - ध्वजा[३९०] शिवाराध्या[३९१], शूर्प - हस्ता[३९२] कृशाङ्गिनी[३९३]।
शुभ्र - केशी[३९४] कोटराक्षी[३९५], विधवा[३९६] पति - घातिनी[३९७] ।।५१।।
सर्व - सिद्धि - करी[३९८] दुष्टा[३९९], क्षुधार्त्ता[४००] शिव-भक्षिणी[४०१]।
वर्गात्मिका[४०२] त्रि - कालज्ञा[४०३], त्रि - वर्गा[४०४] त्रिदशार्चिता[४०५] ।।५२।।

श्रीमती[४०६] भोगिनी[४०७] काशी[४०८], अविमुक्ता[४०९] गयेश्वरी[४१०] ।
सिद्धाम्बिका[४११] सुवर्णाक्षी[४१२], कोलाम्बा[४१३] सिद्ध - योगिनी[४१४] ।।५३।।
देव - ज्योतिः - समुद्भूता[४१५], देव - ज्योतिः - स्वरूपिणी[४१६] ।
अच्छेद्या[४१७] अद्भुता[४१८] तीव्रा[४१९], व्रतस्था[४२०] व्रत - चारिणी[४२१] ।।५४।।
सिद्धिदा[४२२] धूमिनी[४२३] तन्वी[४२४], भ्रामरी[४२५] रक्त - दन्तिका[४२६] ।
स्वस्तिका[४२७] गगना[४२८] वाणी[४२९], जाह्नवी[४३०] भव - भामिनी[४३१] ।।५५।।
पतिव्रता[४३२] महा - मोहा[४३३], मुकुटा[४३४] मुकुटेश्वरी[४३५] ।
गुह्येश्वरी[४३६] गुह्य - माता[४३७], चण्डिका[४३८] गुह्य - कालिका[४३९] ।।५६।।
प्रसूतिराकुतिश्चित्ता[४४०-४२], चिन्ता[४४३] देवाहुतिस्त्रयी[४४४-४५] ।।५७।।
अनुमतिः[४४६] कुहू[४४७] राका[४४८], सिनीवाली[४४९] त्विषा[४५०] रसा[४५१] ।
सुवर्चा[४५२] वर्चला[४५३] शार्वी[४५४], विकेशा[४५५] कृष्ण - पिङ्गला[४५६] ।।५८।।
स्वप्नावती[४५७] चित्र - लेखा[४५८], अन्न-पूर्णा[४५९] चतुष्टया[४६०] ।
पुण्य - लभ्या[४६१] वरारोहा[४६२], श्यामाङ्गी[४६३] शशि - शेखरा[४६४] ।।५९।।
हरणी[४६५] गौतमी[४६६] मेना[४६७], यादवा[४६८] पूर्णिमा[४६९] अमा[४७०] ।
त्रिखण्डा[४७१] त्रिमुण्डा[४७२] मान्या[४७३], भूत-माता[४७४] भवेश्वरी[४७५] ।।६०।।
भोगदा[४७६] स्वर्गदा[४७७] मोक्षा[४७८], सुभगा[४७९] यज्ञ - रूपिणी[४८०] ।
अन्नदा[४८१] सर्व - सम्पत्तिः[४८२], सङ्कटा[४८३] सम्पदा[४८४] स्मृतिः[४८५] ।।६१।।
वैदूर्य - मुकुटा[४८६] मेधा[४८७], सर्व - विद्येश्वरेश्वरी[४८८] ।
ब्रह्मानन्दा[४८९] ब्रह्म-दात्री[४९०], मृडानी[४९१] कैटभेश्वरी[४९२] ।।६२।।
अरुन्धती[४९३] अक्ष-माला[४९४], अस्थिरा[४९५] ग्राम्य-देवता[४९६] ।
वर्णेश्वरी[४९७] वर्ण - माता[४९८], चिन्ता - पूर्णी[४९९] विलक्षणा[५००] ।।६३।।
त्रीक्षणा[५०१] मङ्गला[५०२] काली[५०३], वैराटी[५०४] पद्म-मालिनी[५०५] ।
अमला[५०६] विकटा[५०७] मुख्या[५०८], अविज्ञेया[५०९] स्वयम्भुवा[५१०] ।।६४।।

ऊर्ज्जा[५११] तारावती[५१२] वेला[५१३], मानवी[५१४] च चतुः - स्तनी[५१५]।
चतुर्नेत्रा[५१६] चतुर्हस्ता[५१७], चतुर्दन्ता[५१८] चतुर्मुखी[५१९]।।६५।।
शत-रूपा[५२०] बहु - रूपा[५२१], अरूपा[५२२] विश्वतोमुखी[५२३]।
गरिष्ठा[५२४] गुर्विणी[५२५] गुर्वी[५२६], व्याप्या[५२७] भौमी[५२८] च भाविनी[५२९]।।६६।।
अजाता[५३०] सुजाता[५३१] व्यक्ता[५३२], अचला[५३३] अक्षया[५३४] क्षमा[५३५]।
मारिषा[५३६] धर्मिणी[५३७] हर्षा[५३८], भूत-धात्री[५३९] च धेनुका[५४०]।।६७।।
अयोनिजा[५४१] अजा[५४२] साध्वी[५४३], शची[५४४] क्षेमा[५४५] क्षयङ्करी[५४६]।
बुद्धिर्लज्जा[५४७-४८] मही[५४९] सिद्धिः[५५०], शाक्री[५५१] शान्तिः[५५२] क्रियावती[५५३]।।६८।।
प्रज्ञा[५५४] प्रीतिः[५५५] श्रुतिः[५५६] श्रद्धा[५५७], स्वाहा[५५८] कान्तिर्वपुः स्वधा[५५९-६१]।
उन्नतिः[५६२] सन्नतिः[५६३] ख्यातिः[५६४], शुद्धिः[५६५] स्थितिर्मनस्विनी[५६६-६७]।।६९।।
उद्यमा[५६८] वीरिणी[५६९] क्षान्तिर्मार्कण्डेयी[५७०-७१] त्रयोदशी[५७२]।
प्रसिद्धा[५७३] प्रतिष्ठा[५७४] व्याप्ता[५७५], अनुसूयाऽऽकृतिर्यमा[५७६-७७]।।७०।।
महा-धीरा[५७८] महा-वीरा[५७९], भुजङ्गी[५८०] वलयाकृतिः[५८१]।
हर-सिद्धा[५८२] सिद्ध-काली[५८३], सिद्धाम्बा[५८४] सिद्ध-पूजिता[५८५]।।७१।।
परानन्दा[५८६] परा-प्रीतिः[५८७], परा-तुष्टिः[५८८] परेश्वरी[५८९]।
वक्रेश्वरी[५९०] चतुर्वक्त्रा[५९१], अनाथा[५९२] शिव-साधिका[५९३]।।७२।।
नारायणी[५९४] नाद-रूपा[५९५], नादिनी[५९६] नर्त्तकी[५९७] नटी[५९८]।
सर्व-प्रदा[५९९] पञ्च-वक्त्रा[६००], कामिला[६०१] कामिका[६०२] शिवा[६०३]।।७३।।
दुर्गमा[६०४] दुरतिक्रान्ता[६०५], दुर्ध्येया[६०६] दुष्परिग्रहा[६०७]।
दुर्जया[६०८] दानवी[६०९] देवी[६१०], दैत्यघ्नी[६११] दैत्य-तापिनी[६१२]।।७४।।
ऊर्जस्वती[६१३] महा-बुद्धिः[६१४], रटन्ती[६१५] सिद्ध-देवता[६१६]।
कीर्तिदा[६१७] प्रवरा[६१८] लभ्या[६१९], शरण्या[६२०] शिव-शोभना[६२१]।।७५।।
सन्मार्ग-दायिनी[६२२] शुद्धा[६२३], सुरसा[६२४] रक्त-चण्डिका[६२५]।
सुरूपा[६२६] द्रविणा[६२७] रक्ता[६२८], विरक्ता[६२९] ब्रह्म-वादिनी[६३०]।।७६।।

अगुणा[६३१] निर्गुणा[६३२] गुण्या[६३३], त्रिगुणा[६३४] त्रिगुणात्मिका[६३५]।
उड्डीयाना[६३६] पूर्ण-शैला[६३७], कामस्था[६३८] च जलन्धरी[६३९] ।।७७।।
श्मशान-भैरवी[६४०] काल-भैरवी[६४१] कुल-भैरवी[६४२]।
त्रिपुरा-भैरवी-देवी[६४३], भैरवी[६४४] वीर-भैरवी[६४५] ।।७८।।
श्रीमहा - भैरवी - देवी[६४६], सुखदानन्द - भैरवी[६४७]।
मुक्तिदा - भैरवी - देवी[६४८], ज्ञानदानन्द - भैरवी[६४९] ।।७९।।
दाक्षायणी[६५०] दक्ष - यज्ञ - नाशिनी[६५१] नग - नन्दिनी[६५२]।
राज - पुत्री[६५३] राज - पूज्या[६५४], भक्ति-वश्या[६५५] सनातनी[६५६] ।।८०।।
अच्युता[६५७] चर्चिका[६५८] माया[६५९], षोडशी[६६०] सुर-सुन्दरी[६६१]।
चक्रेशी[६६२] चक्रिणी[६६३] चक्रा[६६४], चक्र - राज - निवासिनी[६६५] ।।८१।।
नायिका[६६६] यक्षिणी[६६७] बोधा[६६८], बोधिनी[६६९] मुण्डकेश्वरी[६७०]।
बीज-रूपा[६७१] चन्द्र-भागा[६७२], कुमारी[६७३] कपिलेश्वरी[६७४] ।।८२।।
वृद्धाऽति-वृद्धा[६७५-७६] रसिका[६७७], रसना[६७८] पाटलेश्वरी[६७९]।
माहेश्वरी[६८०] महाऽऽनन्दा[६८१], प्रबला[६८२] अबला[६८३] बला[६८४] ।।८३।।
व्याघ्राम्बरी[६८५] महेशानी[६८६], शर्वाणी[६८७] तामसी[६८८] दया[६८९]।
धरणी[६९०] धारिणी[६९१] तृष्णा[६९२], महा-मारी[६९३] दुरत्यया[६९४] ।।८४।।
रङ्गिनी[६९५] टङ्किनी[६९६] लीला[६९७], महा-वेगा[६९८] मखेश्वरी[६९९]।
जयदा[७००] जित्वरा[७०१] जेत्री[७०२], जयश्री[७०३] जय-शालिनी[७०४] ।।८५।।
नर्मदा[७०५] यमुना[७०६] गङ्गा[७०७], वेन्वा[७०८] वेणी[७०९] दृषद्वती[७१०]।
दशार्णा[७११] अलका[७१२] सीता[७१३], तुङ्ग-भद्रा[७१४] तरङ्गिणी[७१५] ।।८६।।
मदोत्कटा[७१६] मयूराक्षी[७१७], मीनाक्षी[७१८] मणि-कुण्डला[७१९]।
सु-महा[७२०] महतां सेव्या[७२१], मायूरी[७२२] नारसिंहिका[७२३] ।।८७।।
वगला[७२४] स्तम्भिनी[७२५] पीता[७२६], पूजिता[७२७] शिव-नायिका[७२८]।
वेद-वेद्या[७२९] महा-रौद्री[७३०], वेद-बाह्या[७३१] गति-प्रदा[७३२] ।।८८।।

सर्व-शास्त्र-मयी[७३३] आर्या[७३४], अवाङ् - मनस-गोचरा[७३५]।
अग्नि-ज्वाला[७३६] महा-ज्वाला[७३७], प्रज्वाला[७३८] दीप्त-जिह्विका[७३९] ॥८९॥
रञ्जनी[७४०] रमणी[७४१] रुद्रा[७४२], रमणीया[७४३] प्रभञ्जनी[७४४]।
वरिष्ठा[७४५] विशिष्टा[७४६] शिष्टा[७४७], श्रेष्ठा[७४८] निष्ठा[७४९] कृपा-वती[७५०] ॥९०॥
ऊर्ध्व-मुखी[७५१] विशालास्या[७५२], रुद्र-भार्या[७५३] भयङ्करी[७५४]।
सिंह-पृष्ठ-समासीना[७५५], शिव - ताण्डव - दर्शिनी[७५६] ॥९१॥
हैम-वती[७५७] पद्म-गन्धा[७५८], गन्धेश्वरी[७५९] भव-प्रिया[७६०]।
अणु - रूपा[७६१] महा-सूक्ष्मा[७६२], प्रत्यक्षा[७६३] च मखान्तका[७६४] ॥९२॥
सर्व-विद्या[७६५] रक्त-नेत्रा[७६६], बहु-नेत्रा[७६७] अनेत्रका[७६८]।
विश्वम्भरा[७६९] विश्व-योनिः[७७०], सर्वाकारा[७७१] सुदर्शना[७७२] ॥९३॥
कृष्णाजिन - धरा देवी[७७३], उत्तरा[७७४] कन्द - वासिनी[७७५]।
प्रकृष्टा[७७६] प्रहृष्टा[७७७] हृष्टा[७७८], चन्द्र - सूर्याग्नि - भक्षिणी[७७९] ॥९४॥
विश्वे-देवी[७८०] महा-मुण्डा[७८१], पञ्च-मुण्डाधि-वासिनी[७८२]।
प्रसाद-सुमुखी[७८३] गूढा[७८४] सु - मुखा[७८५] सु-मुखेश्वरी[७८६] ॥९५॥
तत्-पदा[७८७] सत्-पदाऽत्यर्था[७८८-८९], प्रभा-वती[७९०] दया-वती[७९१]।
चण्ड-दुर्गा[७९२] चण्डी - देवी[७९३], वन - दुर्गा[७९४] वनेश्वरी[७९५] ॥९६॥
ध्रुवेश्वरी[७९६] ध्रुवा[७९७] ध्रौव्या[७९८], ध्रुवाराध्या[७९९] ध्रुवा-गतिः[८००]।
सच्चिदा[८०१] सच्चिदानन्दा[८०२], आपो-मयी[८०३] महा-सुखा[८०४] ॥९७॥
वागीशी[८०५] वाग्-भवाऽऽकण्ठ-वासिनी[८०६-७] वह्नि-सुन्दरी[८०८]।
गण - नाथ - प्रिया[८०९] ज्ञान-गम्या[८१०] च सर्व-लोकगा[८११] ॥९८॥
प्रीतिदा[८१२] गतिदा[८१३] प्रेया[८१४], ध्येया[८१५] ज्ञेया[८१६] भयापहा[८१७]।
श्रीकरी[८१८] श्रीधरी[८१९] सुश्री[८२०], श्रीविद्या[८२१] श्री - विभावनी[८२२] ॥९९॥

श्रीयुता[८२३] श्रीमतां सेव्या[८२४], श्रीमूर्तिः[८२५] स्त्री-स्वरूपिणी[८२६]।
अनृता[८२७] सुनृता[८२८] सेव्या[८२९], सर्व - लोकोत्तमोत्तमा[८३०] ॥१००॥
जयन्ती[८३१] चन्दना[८३२] गौरी[८३३], गर्जिनी[८३४] गगनोपमा[८३५]।
छिन्न - मस्ता[८३६] महा - मत्ता[८३७], रेणुका[८३८] वन - शङ्करी[८३९] ॥१०१॥
ग्राहिका[८४०] ग्रासिनी[८४१] देव-भूषणा[८४२] च कपर्दिनी[८४३]।
सुमतिस्तपती[८४४-८५] स्वस्था[८४६], हृदिस्था[८४७] मृग-लोचना[८४८] ॥१०२॥
मनोहरा[८४९] वज्र-देहा[८५०], कुलेशी[८५१] काम-चारिणी[८५२]।
रक्ताभा[८५३] निद्रिता[८५४] निद्रा[८५५], रक्ताङ्गी[८५६] रक्त-लोचना[८५७] ॥१०३॥
कुल-चण्डा[८५८] चण्ड-वक्त्रा[८५९], चण्डोग्रा[८६०] चण्ड-मालिनी[८६१]।
रक्त-चण्डी[८६२] रुद्र-चण्डी[८६३], चण्डाक्षी[८६४] चण्ड-नायिका[८६५] ॥१०४॥
व्याघ्रास्या[८६६] शैलजा[८६७] भाषा[८६८], वेदार्था[८६९] रण-रङ्गिणी[८७०]।
विल्व-पत्र - कृतावासा[८७१], तरुणी[८७२] शिव - मोहिनी[८७३] ॥१०५॥
स्थाणु-प्रिया[८७४] करालास्या[८७५], गुणदा[८७६] लिङ्ग-वासिनी[८७७]।
अविद्या[८७८] ममता[८७९] अज्ञा[८८०], अहन्ता[८८१] अशुभा[८८२] कृशा[८८३] ॥१०६॥
महिषघ्नी[८८४] सु-दुष्प्रेक्ष्या[८८५], तमसा[८८६] भव-मोचनी[८८७]।
पुर-हुता[८८८] सु-प्रतिष्ठा[८८९], रजनी[८९०] इष्ट-देवता[८९१] ॥१०७॥
दुःखिनी[८९२] कातरा[८९३] क्षीणा[८९४], गोमती[८९५] त्र्यम्बकेश्वरा[८९६]।
द्वारावती[८९७] अप्रमेया[८९८], अव्ययाऽमित-विक्रमा[८९९-९००] ॥१०८॥
माया-वती[९०१] कृपा-मूर्तिः[९०२], द्वारेशी[९०३] द्वार-वासिनी[९०४]।
तेजो-मयी[९०५] विश्व-कामा[९०६], मन्मथा[९०७] पुष्करावती[९०८] ॥१०९॥
चित्रा-देवी[९०९] महा-काली[९१०], काल-हन्त्री[९११] क्रिया-मयी[९१२]।
कृपा-मयी[९१३] कृपा-श्रेष्ठा[९१४], करुणा[९१५] करुणा-मयी[९१६] ॥११०॥
सुप्रभा[९१७] सुव्रता[९१८] माध्वी[९१९], मधुघ्नी[९२०] मुण्ड - मर्दिनी[९२१]।
उल्लासिनी[९२२] महोल्लासा[९२३], स्वामिनी[९२४] शर्म - दायिनी[९२५] ॥१११॥

श्रीमाता[१२६] श्रीमहा - राज्ञी[१२७], प्रसन्ना[१२८] प्रसन्नानना[१२९]।
स्व-प्रकाश[१३०] महा-भूमा[१३१], ब्रह्म-रूपा[१३२] शिवङ्करी[१३३]॥११२॥
शक्तिदा[१३४] शान्तिदा[१३५] कर्म-फलदा[१३६] श्री-प्रदायिनी[१३७]।
प्रियदा[१३८] धनदा[१३९] श्रीदा[१४०], मोक्षदा[१४१] ज्ञानदा[१४२] भवा[१४३]॥११३॥
भूमानन्द - करी[१४४] भूमा[१४५], प्रसीद - श्रुति - गोचरा[१४६]।
रक्त - चन्दन - सिक्ताङ्गी[१४७], सिन्दूराङ्कित - भालिनी[१४८]॥११४॥
स्वच्छन्द-शक्तिर्गहना[१४९-५०], प्रजा-वती[१५१] सुखावहा[१५२]।
योगेश्वरी[१५३] योगाराध्या[१५४], महा - त्रिशूल - धारिणी[१५५]॥११५॥
राज्येशी[१५६] त्रिपुरा[१५७] सिद्धा[१५८], महा-विभव-शालिनी[१५९]।
ह्रीङ्कारी[१६०] शङ्करी[१६१] सर्व-पङ्कजस्था[१६२] शत - श्रुतिः[१६३]॥११६॥
निस्तारिणी[१६४] जगन्माता[१६५], जगदम्बा[१६६] जगद्धिता[१६७]।
साष्टाङ्ग - प्रणति - प्रीता[१६८], भक्तानुग्रह - कारिणी[१६९]॥११७॥
शरणागता - दीनार्त - परित्राण - परायणा[१७०]।
निराश्रयाश्रया[१७१] दीन - तारिणी[१७२] भक्त - वत्सला[१७३]॥११८॥
दीनाम्बा[१७४] दीन - शरणा[१७५], भक्तानाम - भयङ्करी[१७६]।
कृताञ्जलि - नमस्कारा[१७७], स्वयम्भु - कुसुमार्चिता[१७८]॥११९॥
कौल-तर्पण-सम्प्रीता[१७९], स्वयं भाति[१८०] विभातिनी[१८१]।
शत - शीर्षाऽनन्त - शीर्षा[१८२-८३], श्रीकण्ठार्ध - शरीरिणी[१८४]॥१२०॥
जय - ध्वनि - प्रिया[१८५] कुल-भास्करी[१८६] कुल-साधिका[१८७]।
अभय - वरद - हस्ता[१८८], सर्वानन्दा[१८९] च संविदा[१९०]॥१२१॥
महीयसी[१९१] महा-मूर्तिः[१९२], सती राज्ञी[१९३] भयार्त्तिहा[१९४]।
ब्रह्म-मयी[१९५] विश्व - पीठा[१९६], प्रज्ञाना[१९७] महिमा - मयी[१९८]॥१२२॥
सिंहारूढा[१९९] वृषारूढा[१०००], अश्वारूढा[१००१] अधीश्वरी[१००२]।
वराभय - करा[१००३] सर्व - वरेण्या[१००४] विश्व - विक्रमा[१००५]॥१२३॥
विश्वाश्रया[१००६] महा - भूतिः[१००७], श्रीप्रज्ञादि - समन्विता[१००८]॥१२४॥

फल-श्रुति

दुर्गा-नाम-सहस्राख्यं, स्तोत्रं तन्त्रोत्तमोत्तमम्।
पठनात् श्रवणात् सद्यो, नरो मुच्येत सङ्कटात्।।१।।

उक्त 'दुर्गा सहस्र-नाम स्तोत्र' सब तन्त्रों में श्रेष्ठ है। इसको पढ़ने एवं सुनने से मनुष्य सङ्कट से तुरन्त छूट जाता है।।१

अश्वमेध-सहस्रानां, वाजपेयस्य कोटय:।
सकृत् पाठेन जायन्ते, महा-माया-प्रसादत:।।२।।

इसके एक पाठ से सहस्रों अश्वमेध और करोड़ों वाजपेय यज्ञों का फल जगदम्बा की कृपा से प्राप्त होता है।।२

य इदं पठति नित्यं, देव्यागारे कृताञ्जलि:।
किं तस्य दुर्लभं देवि!, दिवि भुवि रसातले।।३।।

जो व्यक्ति इसे प्रति-दिन देवी-मन्दिर में हाथ जोड़कर पढ़ता है, उसे हे देवि! पृथ्वी, स्वर्ग और पाताल में क्या वस्तु दुर्लभ है अर्थात् उसे सर्वत्र सब कुछ सुलभ हो जाता है।।३

स दीर्घायु: सुखी वाग्मी, निश्चितं पर्वतात्मजे!।
श्रद्धयाऽश्रद्धया वापि, दुर्गा-नाम-प्रण्सादत:।।४।।

वह व्यक्ति हे पार्वति! निश्चय ही दीर्घायु, सुखी और बोलने में प्रवीण होता है। चाहे श्रद्धा से ले या बिना श्रद्धा के दुर्गा-नाम के प्रसाद से मृत्यु-क्षय व ग्रह-शान्ति होती है।।४

य: इदं पठते नित्यं, देवी-भक्त: मुदान्वित:।
तस्य शत्रु-क्षयं याति, यदि शक्र-समो भवेत्।।५।।

देवी का जो भक्त इसे प्रति-दिन आनन्द के साथ पढ़ता है, उसके शत्रु का नाश होता है, चाहे शत्रु इन्द्र के समान ही क्यों न हो।।५

प्रति-नाम समुच्चार्य, स्रोतसि य: प्रपूजयेत्।
षण्मासाभ्यन्तरे देवि!, निर्धनी धन-वान् भवेत्।।६।।

प्रत्येक नाम का उच्चारण कर जो व्यक्ति नदी में पूजन करता है, वह यदि धन-हीन है, तो छ: मास के भीतर धनी हो जाता है।।६

वन्ध्या वा काक-वन्ध्या वा, मृत-वत्सा च याऽङ्गना।
अस्य प्रयोग-मात्रेण, बहु-पुत्र-वती भवेत्।।७।।

बन्ध्या, काक-बन्ध्या अथवा मृत-वत्सा जो स्त्री होती है, वह इसके प्रयोग मात्र से बहुत से पुत्रों की माता होती है।।७

आरोग्यार्थे शतावृत्तिः, पुत्रार्थे ह्येक-वत्सरम्।
दीप्ताग्नि-सन्निधौ पाठात्, अपापो भवति ध्रुवम्।।८।।

रोग से अच्छे होने के लिए एक सौ बार, पुत्र-प्राप्ति के लिए एक वर्ष तक और प्रदीप्त अग्नि के पास इसका पाठ करने से मनुष्य पाप-रहित होता है।।८

अष्टोत्तर-शतेनास्य, पुरश्चर्य्या विधीयते।
कलौ चतुर्गुणं प्रोक्तं, पुरश्चरण-सिद्धये।।९।।

१०८ बार के पाठ से इसका पुरश्चरण होता है। कलियुग में पुरश्चरण की सिद्धि के लिए इसका चौगुना अर्थात् **४३२ बार पाठ** करना चाहिए।।९

जवा-कमल-पुष्पं च, चम्पकं नाग-केशरम्।
कदम्बं कुसुमं चापि, प्रति-नाम्ना समर्चयेत्।।१०।।

जवा, कमल, चम्पक, नाग-केशर, कदम्ब और कुसुम पुष्पों से प्रत्येक नाम के द्वारा पूजन करे।।१०

प्रणवादि-नमोऽन्तेन, चतुर्थ्यन्तेन मन्त्र-वित्।
स्रोतसि पूजयित्वा तु, उपहारं समर्पयेत्।।११।।

आदि में **प्रणव (ॐ)**, अन्त में **'नमः'** और **चतुर्थी**-**विभक्ति** से युक्त नाम—इस प्रकार मन्त्रज्ञ प्रत्येक नाम के द्वारा नदी में पूजन कर उपहार प्रदान करे।।११

इच्छा-ज्ञान-क्रिया-सिद्धिः, निश्चितं गिरि-नन्दिनि।
देहान्ते परमं स्थानं, यत् सुरैरपि दुर्लभम्।
स यास्यति न सन्देहो, श्रीदुर्गा-नाम-कीर्त्तनात्।।१२।।

हे गिरिजे! (उक्त प्रकार पूजा करनेवाले व्यक्ति की) **इच्छा, ज्ञान, क्रिया** में निश्चय ही सिद्धि होकर, देहान्त होने पर देवताओं के लिए भी अप्राप्य परम स्थान को, **श्रीदुर्गा**-**नाम** के कीर्तन के फल-स्वरूप वह जाएगा, इसमें सन्देह नहीं।।१२

भजेद् दुर्गां स्मरेद् दुर्गां, जपेद् दुर्गां शिव-प्रियाम्।
तत्क्षणात् शिवमाप्नोति, सत्यं सत्यं वरानने!।।१३।।

शङ्कर-**प्रिया दुर्गा का भजन करे, दुर्गा का स्मरण** करे और **दुर्गा का जप** करे। **हे सुमुखि!** इससे मनुष्य उसी क्षण कल्याण को प्राप्त करता है, यह सर्वथा सत्य है।।१३

।। तन्त्रराज-तन्त्रे श्रीदुर्गा-सहस्र-नाम-स्तोत्रम् ।।

***

श्रीदुर्गा-सहस्र-नाम-साधना

किसी भी देवता की उपासना में उसके **'सहस्र-नाम'** का अपना महत्त्व होता है। प्राय: लोग अपने **इष्ट-देवता** के **सहस्र-नाम-स्तोत्र** का पाठ ही करते हैं किन्तु विशेष फल की प्राप्ति चाहनेवाले भक्त-जन **सहस्र-नाम** के द्वारा विशेष साधना करते हैं और अपने अभीष्ट को पाने में सफल भी होते हैं।

ऐसी साधना में **भगवती** के **सहस्र-नामों** में से प्रत्येक नाम का **'चतुर्थ्यन्त'**-रूप लेना पड़ता है। संस्कृत में चतुर्थी विभक्ति सम्प्रदाय कारक की बोधक है। किसी शब्द के अन्त में इस चतुर्थी विभक्ति के लगने से उस शब्द के अर्थ में 'के लिए' का भाव जुड़ जाता है। उदाहरण के लिए **'श्रीदुर्गा-सहस्र-नाम'** का पहला नाम है **'श्रीदुर्गा'**। इसमें चतुर्थी विभक्ति लगाने से इस नाम का रूप बनता है **'श्रीदुर्गायै'**, जिसका भावार्थ होगा **'श्रीदुर्गा के लिए'**। इस चतुर्थ्यन्त नाम रूप के अन्त में **'नम:'**, **'पूजयामि नम:'**, **'तर्पयामि नम:'** और **'नम: स्वाहा'** जोड़ने से प्रत्येक नाम के प्रति क्रमश: **नमन**, **पूजन**, **तर्पण** और **होम** की क्रिया सम्पन्न करने के वाक्य बन जाते हैं। साधकों की सुविधा के लिए यहाँ **भगवती दुर्गा** के **सहस्र-नामों** के **चतर्थ्यन्त रूप** प्रकाशित किए जा रहे हैं।

प्रयोग-विधि

सङ्कल्प—ॐ तत्सत् अद्यैतस्य ब्रह्मणोऽह्नि-द्वितीय-प्रहरार्द्धे श्वेत-वराह-कल्पे जम्बू-द्वीपे भरत-खण्डे आर्यावर्त-देशे पुण्य-क्षेत्रे कलियुगे कलि-प्रथम-चरणे अमुक-संवत्सरे अमुक-मासे अमुक-पक्षे अमुक-तिथौ अमुक-वासरे अमुक-गोत्रो अमुक-शर्मा (वर्मा, गुप्ता, दासो वा) अहं श्रीदुर्गा-प्रीत्यर्थं सहस्र-नाम-मन्त्रै: यथा-शक्ति यजनं करिष्ये।

विनियोग—ॐ अस्य श्रीदुर्गा-सहस्त्र-नाम-माला-मन्त्रस्य श्रीनारद ऋषि:, गायत्री छन्द:, श्रीदुर्गा देवता, दुं वीजं, ह्रीं शक्ति:, ॐ कीलकं, श्रीदुर्गा-प्रीत्यर्थं श्रीदुर्गा-सहस्त्र-नाम-जपे विनियोग:।

सहस्र-नामावली के नाम-मन्त्रों के **'जप'** मात्र का अनुष्ठान करते समय उक्त विनियोग करना चाहिए। यदि **नाम-मन्त्रों** के द्वारा **'पूजन'** करना हो, तो **'जपे विनियोग:'** के स्थान पर **'पूजने विनियोग:'** पढ़ना चाहिए और यदि **'पूजन'** के साथ **'तर्पण'** भी करना हो, तो **'पूजने तर्पणे च विनियोग:'** पढ़ना चाहिए। नाम-मन्त्रों से **'होम'** करना हो, तो **'होमे विनियोग:'** पढ़ना चाहिए।

ऋष्यादि-न्यास—श्रीनारद-ऋषये नमः शिरसि। गायत्री-छन्दसे नमः मुखे। श्रीदुर्गा-देवतायै नमः हृदये। दुं बीजाय नमः गुह्ये। ह्रीं शक्तये नमः पादयोः। ॐ कीलकाय नमः नाभौ। श्रीदुर्गा-प्रीत्यर्थं श्रीदुर्गा-सहस्त्र-नाम-जपे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे।

सहस्र-नामावली के नाम-मन्त्रों के **'जप'** मात्र का अनुष्ठान करते समय उक्त **ऋष्यादि-न्यास** करना चाहिए। यदि **नाम-मन्त्रों** के द्वारा **'पूजन'** करना हो, तो **'नाम-जपे'** के स्थान पर **'नाम-पूजने'** पढ़ना चाहिए और यदि **'पूजन'** के साथ **'तर्पण'** भी करना हो, तो **'नाम-पूजने तर्पणे च'** पढ़ना चाहिए। नाम-मन्त्रों से **'होम'** करना हो, तो **'नाम-होमे'** पढ़ना चाहिए।

	कर-न्यास	अङ्ग-न्यासः
ह्रां- 'ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै'	अंगुष्ठाभ्यां नमः	हृदयाय नमः
ह्रीं- 'ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै'	तर्जनीभ्यां स्वाहा	शिरसे स्वाहा
ह्रूं- 'ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै'	मध्यमाभ्यां वषट्	शिखायै वषट्
ह्रैं- 'ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै'	अनामिकाभ्यां हुम्	कवचाय हुम्
ह्रौं- 'ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै'	कनिष्ठाभ्यां वौषट्	नेत्र-त्रयाय वौषट्
ह्रः- 'ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै'	करतल-करपृष्ठाभ्यां फट्	अस्त्राय फट्

।। ध्यान।।

सिंहस्था शशि-शेखरा मरकत-प्रख्या चतुर्भिर्भुजैः,
शङ्ख-चक्र-धनुः-शरांश्च दधती नेत्रैस्त्रिभिः शोभिता।।
आमुक्ताङ्गद-हार-कङ्कण-रणत्-काञ्ची-क्वणन्-नूपुरा।
दुर्गा दुर्गति-हारिणी भवतु वो रत्नोल्लसत्-कुण्डला।।

।। मानस-पूजन।।

लं पृथिव्यात्मकं गन्धं समर्पयामि (अधो-मुख कनिष्ठा एवं अंगुष्ठ से)।
हं आकाशात्मकं पुष्पं समर्पयामि (अधो-मुख अंगुष्ठ एवं तर्जनी से)।
यं वाय्वात्मकं धूपं समर्पयामि (ऊर्ध्व-मुख तर्जनी एवं अंगुष्ठ से)।
रं वह्न्यात्मकं दीपं दर्शयामि (ऊर्ध्व-मुख मध्यमा एवं अंगुष्ठ से)।
वं अमृतात्मकं नैवेद्यं निवेदयामि (ऊर्ध्व-मुख अनामिका एवं अंगुष्ठ से)।
सं सर्वात्मकं ताम्बूलं निवेदयामि (ऊर्ध्व-मुख सर्वांगुलियों से)।

सहस्र-नामावली द्वारा
१ जप, २ पूजन, ३ पूजन-तर्पण एवं ४ होम

१ **'जप'-प्रयोग** में प्रत्येक **चतुर्थ्यन्त** नाम-मन्त्र के आदि में **'श्री'** और अन्त में **'नमः'** जोड़कर **'जप'** करना चाहिए, जैसा नीचे प्रकाशित है। २ **'पूजन'-प्रयोग** में प्रत्येक **चतुर्थ्यन्त** नाम-मन्त्र के आदि में **'श्री'** और अन्त में **'पूजयामि नमः'** जोड़कर **'पूजन'** करना चाहिए। ३ **पूजन-तर्पण-प्रयोग** में प्रत्येक **चतुर्थ्यन्त** नाम-मन्त्र के आदि में **'श्री'** और अन्त में **'पूजयामि नमः तर्पयामि नमः'** जोड़कर **'पूजन-तर्पण'** करना चाहिए। ४ **हवन-प्रयोग** में प्रत्येक **चतुर्थ्यन्त** नाम-मन्त्र के आदि में **'श्री'** और अन्त में **'नमः स्वाहा'** जोड़कर **'हवन'** करना चाहिए। **'हवन'** करने हेतु पहले विधि-पूर्वक होमाग्नि की प्रतिष्ठा करनी चाहिए, फिर **'नाम-मन्त्रों'** द्वारा **'हवन'** करना चाहिए।

सहस्र-नामावली

०१ श्री श्रीदुर्गायै नमः
०२ श्री दुर्गति - हरायै नमः
०३ श्री परिपूर्णायै नमः
०४ श्री परात्परायै नमः
०५ श्री सर्वोपाधि - बिनिर्मुक्तायै नमः
०६ श्री भव - भार - विनाशिन्यै नमः
०७ श्री कार्य - कारण - निर्मुक्तायै नमः
०८ श्री लीला - विग्रह - धारिण्यै नमः
०९ श्री सर्व-शृङ्गार-शोभाढ्यायै नमः
१० श्री सर्वायुध-समन्वितायै नमः
११ श्री सूर्य-कोटि-सहस्राभायै नमः
१२ श्री चन्द्र-कोटि-निभाननायै नमः
१३ श्री गणेश-कोटि-लावण्यायै नमः
१४ श्री विष्णु-कोट्यरि-मर्दिन्यै नमः
१५ श्री दावाग्नि-कोटि-नलिन्यै नमः
१६ श्री रुद्र-कोट्युग्र-रूपिण्यै नमः
१७ श्री समुद्र-कोटि-गम्भीरायै नमः
१८ श्री वायु-कोटि-महा-बलायै नमः
१९ श्री आकाश-कोटि-विस्तारायै नमः
२० श्री यम-कोटि-भयङ्कर्यै नमः
२१ श्री मेरु-कोटि-समुच्छ्रायायै नमः
२२ श्री गण-कोटि-समृद्धिदायै नमः
२३ श्री नमस्यायै नमः
२४ श्री प्रथमायै नमः
२५ श्री पूज्यायै नमः
२६ श्री सकलायै नमः
२७ श्री अखिलाम्बिकायै नमः
२८ श्री महा-प्रकृत्यै नमः
२९ श्री सर्वात्मायै नमः
३० श्री भुक्ति-मुक्ति-प्रदायिन्यै नमः
३१ श्री अजन्यायै नमः
३२ श्री जनन्यै नमः
३३ श्री जन्यायै नमः
३४ श्री महा - वृषभ - वाहिन्यै नमः

३५ श्री कर्दम्यै नमः
३६ श्री काश्यप्यै नमः
३७ श्री पद्मायै नमः
३८ श्री सर्व-तीर्थ-निवासिन्यै नमः
३९ श्री भीमेश्वर्यै नमः
४० श्री भीम - नादायै नमः
४१ श्री भव - सागर - तारिण्यै नमः
४२ श्री सर्व-देव-शिरो - रत्न - निघृष्ट - चरणाम्बुजायै नमः
४३ श्री स्मरतां सर्व - पापघ्न्यै नमः
४४ श्री सर्व-कारण-कारणायै नमः
४५ श्री सर्वार्थ-साधिकायै नमः
४६ श्री मातायै नमः
४७ श्री सर्व-मङ्गल-मङ्गलायै नमः
४८ श्री पृच्छायै नमः
४९ श्री पृश्न्यै नमः
५० श्री महा-ज्योत्यै नमः
५१ श्री अरण्यायै नमः
५२ श्री वन-देवतायै नमः
५३ श्री भीत्यै नमः
५४ श्री भूत्यै नमः
५५ श्री मत्यै नमः
५६ श्री शक्त्यै नमः
५७ श्री तुष्ट्यै नमः
५८ श्री पुष्ट्यै नमः
५९ श्री उषायै नमः
६० श्री धृत्यै नमः
६१ श्री उत्तान-हस्तायै नमः
६२ श्री सम्भूत्यै नमः
६३ श्री वृक्ष-वल्कल-धारिण्यै नमः
६४ श्री महा-प्रभायै नमः
६५ श्री महा-चण्ड्यै नमः
६६ श्री दीप्तास्यायै नमः
६७ श्री उग्र-लोचनायै नमः
६८ श्री महा-मेघ-प्रभायै नमः
६९ श्री विद्यायै नमः
७० श्री मुक्त-केश्यै नमः
७१ श्री दिगम्बर्यै नमः
७२ श्री हसन्मुख्यै नमः
७३ श्री साट्टहासायै नमः
७४ श्री लोल-जिह्वायै नमः
७५ श्री महेश्वर्यै नमः
७६ श्री मुण्डाल्यै नमः
७७ श्री अभयायै नमः
७८ श्री दक्षायै नमः
७९ श्री महा-भीमायै नमः
८० श्री वरोद्यतायै नमः
८१ श्री खड्ग-मुण्ड-धरायै नमः
८२ श्री मुक्त्यैः नमः
८३ श्री कुमुदायै नमः
८४ श्री अज्ञान-नाशिन्यै नमः
८५ श्री अम्बालिकायै नमः
८६ श्री महा-वीर्यायै नमः
८७ श्री सारदायै नमः
८८ श्री कनकेश्वर्यै नमः
८९ श्री परमात्मायै नमः
९० श्री परायै नमः
९१ श्री क्षिप्तायै नमः

०९२ श्री शूलिन्यै नमः
०९३ श्री परमेश्वर्यै नमः
०९४ श्री महा-काल-समासक्तायै नमः
०९५ श्री शिवा-शत-निनादिन्यै नमः
०९६ श्री घोराङ्ग्यै नमः
०९७ श्री मुण्ड-मुकुटायै नमः
०९८ श्री श्मशानास्थि-कृताऽऽसनायै नमः
०९९ श्री महा-श्मशान-निलयायै नमः
१०० श्री मणि-मण्डप-मध्यगायै नमः
१०१ श्री पान-पात्र-धृतायै नमः
१०२ श्री खर्वायै नमः
१०३ श्री पन्नग्यै नमः
१०४ श्री पर-देवतायै नमः
१०५ श्री सुगन्धायै नमः
१०६ श्री तारिण्यै नमः
१०७ श्री तारायै नमः
१०८ श्री भवान्यै नमः
१०९ श्री वन-वासिन्यै नमः
११० श्री लम्बोदर्यै नमः
१११ श्री महा-दीर्घायै नमः
११२ श्री जटिन्यै नमः
११३ श्री चन्द्र-शेखरायै नमः
११४ श्री पराऽम्बायै नमः
११५ श्री परमाराध्यायै नमः
११६ श्री परेश्यै नमः
११७ श्री ब्रह्म-रूपिण्यै नमः
११८ श्री देव-सेनायै नमः
११९ श्री विश्व-गर्भायै नमः
१२० श्री अग्नि-जिह्वायै नमः
१२१ श्री चतुर्भुजायै नमः
१२२ श्री महा-दंष्ट्रायै नमः
१२३ श्री महा-रात्र्यै नमः
१२४ श्री नीलायै नमः
१२५ श्री नील-सरस्वत्यै नमः
१२६ श्री दक्षजायै नमः
१२७ श्री भारत्यै नमः
१२८ श्री रम्भायै नमः
१२९ श्री महा-मङ्गल-चण्डिकायै नमः
१३० श्री रुद्रजायै नमः
१३१ श्री कौशिक्यै नमः
१३२ श्री पूतायै नमः
१३३ श्री यम-घण्टायै नमः
१३४ श्री महा-बलायै नमः
१३५ श्री कादम्बिन्यै नमः
१३६ श्री चिदानन्दायै नमः
१३७ श्री क्षेत्रस्थायै नमः
१३८ श्री क्षेत्र-कर्षिण्यै नमः
१३९ श्री पञ्च-प्रेत-समारूढायै नमः
१४० श्री ललितायै नमः
१४१ श्री त्वरितायै नमः
१४२ श्री सत्यै नमः
१४३ श्री भैरव्यै नमः
१४४ श्री रूप-सम्पन्नायै नमः
१४५ श्री मदनानल-नाशिन्यै नमः
१४६ श्री जातापहारिण्यै नमः
१४७ श्री वार्त्तायै नमः
१४८ श्री मातृकायै नमः
१४९ श्री अष्ट-मातृकायै नमः

१५० श्री अनङ्ग-मेखलायै नमः
१५१ श्री षष्ठ्यै नमः
१५२ श्री ह्ल्लेखायै नमः
१५३ श्री पर्वतात्मजायै नमः
१५४ श्री वसुन्धरायै नमः
१५५ श्री धरायै नमः
१५६ श्री धारायै नमः
१५७ श्री विधात्र्यै नमः
१५८ श्री विन्ध्य-वासिन्यै नमः
१५९ श्री अयोध्यायै नमः
१६० श्री मथुरायै नमः
१६१ श्री काञ्च्यै नमः
१६२ श्री महैश्वर्यायै नमः
१६३ श्री महोदर्यै नमः
१६४ श्री कोमलायै नमः
१६५ श्री मानदायै नमः
१६६ श्री भव्यायै नमः
१६७ श्री मत्स्योदर्यै नमः
१६८ श्री महा-लयायै नमः
१६९ श्री पाशांकुश-धनुर्वाणायै नमः
१७० श्री लावण्याम्बुधि-चन्द्रिकायै नमः
१७१ श्री रक्त-वासायै नमः
१७२ श्री रक्त-लिप्तायै नमः
१७३ श्री रक्त-गन्ध-विनोदिन्यै नमः
१७४ श्री दुर्लभायै नमः
१७५ श्री सुलभायै नमः
१७६ श्री मत्स्यायै नमः
१७७ श्री माधव्यै नमः
१७८ श्री मण्डलेश्वर्यै नमः
१७९ श्री पार्वत्यै नमः
१८० श्री अमर्यै नमः
१८१ श्री अम्बायै नमः
१८२ श्री महा-पातक-नाशिन्यै नमः
१८३ श्री नित्य-तृप्तायै नमः
१८४ श्री निराभासायै नमः
१८५ श्री अकुलायै नमः
१८६ श्री रोग-नाशिन्यै नमः
१८७ श्री कनकेश्यै नमः
१८८ श्री पञ्च-रूपायै नमः
१८९ श्री नूपुरायै नमः
१९० श्री नील-वाहिन्यै नमः
१९१ श्री जगन्मय्यै नमः
१९२ श्री जगद्धात्र्यै नमः
१९३ श्री अरुणायै नमः
१९४ श्री वारुण्यै नमः
१९५ श्री जयायै नमः
१९६ श्री हिंगुलायै नमः
१९७ श्री कोटरायै नमः
१९८ श्री सेनायै नमः
१९९ श्री कालिन्द्यै नमः
२०० श्री सुर-पूजितायै नमः
२०१ श्री रामेश्वर्यै नमः
२०२ श्री देव-गर्भायै नमः
२०३ श्री त्रि-स्रोतायै नमः
२०४ श्री अखिलेश्वर्यै नमः
२०५ श्री ब्रह्माण्यै नमः
२०६ श्री वैष्णव्यै नमः
२०७ श्री रौद्र्यै नमः

श्रीकालिकायै नमः

श्री श्रीकाली-साधना (१०)

साधना-क्रम-सहित भगवती काली के विशिष्ट स्तोत्र

श्री काली-कर्पूर-स्तोत्र

विषय-प्रवेश

भगवती दक्षिणा काली

- '**श्रीकाली-कर्पूर-स्तोत्र**' का नाम अत्यधिक प्रसिद्ध है। इसकी लोक-प्रियता का मूल कारण यही प्रतीत होता है कि इसके पाठ करने से पाठ-कर्त्ता साधक की मनो-कामना शीघ्र ही फलीभूत हो जाती है।
- '**कर्पूर-स्तोत्र**' यों तो अन्य **महा-विद्याओं** के सम्बन्ध में भी उपलब्ध हैं, किन्तु **भगवती दक्षिणा काली** का **कर्पूर-स्तोत्र** ही विशेषतया प्रचलित है।
- '**श्रीकाली-कर्पूर-स्तोत्र**' का विधान '**महा-काल संहिता**' नामक दुर्लभ ग्रन्थ में लिखा हुआ मिलता है। इसका नाम '**कर्पूर-स्तोत्र**' इसलिए पड़ा है कि इसके प्रथम श्लोक के 'आदि' (प्रारम्भ) में '**कर्पूर**'-शब्द है।
- '**श्रीकाली-कर्पूर-स्तोत्र**' के रचयिता स्वयं **भगवान् महा-काल** माने जाते हैं, जिससे इसे और भी अधिक गौरव प्राप्त है।

- '**श्रीकाली-कर्पूर-स्तोत्र**' के **अनुष्ठान** या **पुरश्चरण-कर्म** में **गुरुदेव** के साक्षात् मार्ग-दर्शन की नितान्त आवश्यकता रहती है। अतः जो भी बन्धु इस स्तोत्र का **पुरश्चरण** करना चाहें, वे इस पुस्तिका की विधि का उपयोग करने के पूर्व इसके सम्बन्ध में अपने **गुरुदेव** की अनुमति अवश्य ले लें। इससे विधि में यदि कोई त्रुटि होगी, तो उसका संशोधन भी हो जाएगा। साथ ही **गुरुदेव** के आशीर्वाद के साथ **पुरश्चरण** करने से सफलता भी निश्चित हो जाएगी।

आदि-सम्पादक
'कुल-भूषण' पण्डित रमादत्त शुक्ल

साधना-क्रम

१–स्तोत्रादि-पाठ के सामान्य नियम

विश्वसार तन्त्र में लिखा है कि **ऋषि, छन्द, देवता** आदि का **न्यास** करने के बाद ही **स्तोत्र का पाठ** करना चाहिए। **न्यास** के बिना तुच्छ फल प्राप्त होता है।

शक्ति-सङ्गम तन्त्र में लिखा है कि जहाँ **ऋषि, छन्दादि** का उल्लेख न हो, वहाँ '**शिव**' को ऋषि, '**गायत्री**' को छन्द, '**हल**' (व्यञ्जन) को बीज, '**स्वर**' को शक्ति, '**अव्यय**' को कीलक और '**स्तुत्य (इष्ट) देवता**' के प्रसाद से काम्यार्थ (अभीष्ट-प्राप्त्यर्थ) **विनियोग** मान लेना चाहिए।

विश्वसार तन्त्र के अनुसार स्तोत्र का जो **मूल-देवता** हो, उसी का **ऋषि, छन्दादि** उस स्तोत्र के सम्बन्ध में ग्रहण कर लेना चाहिए, भले ही उनका उल्लेख स्तोत्र में न किया गया हो।

न्यास के स्थानों के विषय में **काली तन्त्र** का निर्देश है कि **मूर्ध्नि** (शिर) में **ऋषि** का, **मुख में छन्द** का, **हृदय में देवता** का, **गुह्य-देश** में **बीज** का, **पैरों** में **शक्ति** का और **सर्वाङ्ग** में **कीलक** का न्यास करना चाहिए।

वाराही-तन्त्र में **पाठ की विधि** के सम्बन्ध में लिखा है कि किसी आधार पर पुस्तक को रखकर **पाठ** करना चाहिए क्योंकि हाथ में रखी पुस्तक से **पाठ** करने पर आधा ही फल मिलता है। अपने हाथ या अब्राह्मण के हाथ से लिखे स्तोत्र का **पाठ** न करना चाहिए। अधिक **पाठ** करना हो, तो पुस्तक से **पाठ** करना चाहिए। कम संख्या में **पाठ** करना हो, तो पुस्तक के बिना अर्थात् पुस्तक को सामने रखकर स्मृति से **पाठ** करना चाहिए।

२–स्तोत्रादि के पुरश्चरण की अनिवार्यता

रुद्र-यामल तन्त्र में लिखा है कि **सहस्र-नाम** आदि और **कवचादि स्तोत्रों** के सम्बन्ध में भी **पुरश्चरण** करना चाहिए। जहाँ **पुरश्चरण** का उल्लेख नहीं है, वहाँ भी यह आवश्यक है। प्रत्येक स्तोत्र के **पुरश्चरण में दस हजार** (अयुत) पाठ करने की विधि है। पूरा पाठ कर लेने के बाद **हवन** किया जाता है। अन्त में **हवन** के बाद **तर्पण** और **अभिषेक** किया जाता है।

३–श्रीकाली-कर्पूर-स्तोत्र का पुरश्चरण

वीर-तन्त्र में **भगवान् श्री शिव** ने कहा है कि **हे देवि!** सुनो, मैं **कर्पूर-स्तोत्र** की **साधना-विधि** बताऊँगा। **हे देवेशि!** इसे एक बार भी करने पर **भगवती काली** सदा प्रसन्न रहती हैं। **शनिवार** और **मङ्गलवार** के दिन **हे देवि!** स्नान करके एकाग्र-मन से **भगवती कालिका** की पूजा कर समुचित रूप से **सङ्कल्प** करे। फिर **षोढा** आदि **न्यासों** को कर **श्रेष्ठ स्तोत्र** का एक **अयुत** अर्थात् **दस हजार बार पाठ** करे। **पाठ** के पूर्ण होने पर बुद्धिमान साधक तद्दशांश **हवन**, तद्दशांश **तर्पण**, तद्दशांश **मार्जन** कर तद्दशांश ब्राह्मण-भोजन करावे। इसके बाद अपने कार्य की सफलता के लिए सदा इसका प्रयोग करे।

राजा से भय होने पर, **अकाल** पड़ने पर, **शत्रु का सङ्कट** होने पर, **रोग-शोक** या किसी **पीड़ा** के आने पर **हे महेशानि! भगवती महा-काली** के इस स्तोत्र का पाठ करे, तो वह सब प्रकार की शान्ति देती हैं। अन्त में विधि-पूर्वक **कुमारी-पूजन** करना चाहिए। ऐसा करने पर **हे महेशानि!** समुचित सिद्धि निश्चित रूप से प्राप्त होती है।

उक्त विधि के अनुसार '**पुरश्चरण**' हेतु **कर्पूर-स्तोत्र** का **एक अयुत** या **दश हजार पाठ** करना होता है। परन्तु इतनी संख्या में **१ दिन में पाठ** करना सम्भव नहीं है। अतः **शनिवार** या **मङ्गलवार** से **पुरश्चरण** प्रारम्भ कर प्रति-दिन यथा-शक्ति पाठकर **३ मास, ९ मास** या **एक वर्ष** में **एक अयुत (१० हजार) पाठ** का **पुरश्चरण** करना चाहिए। परन्तु **इष्ट-देवता का पूजन** प्रति-दिन करना चाहिए। इस प्रकार **पुरश्चरण** करने से **कर्पूर-स्तोत्र** सिद्ध हो जाएगा और तब **कामना-पूर्ति** के लिए इसका प्रयोग किया जा सकता है।

प्रयोग की विधि यह है कि रात्रि का पहला प्रहर बीत जाने के बाद, जब दूसरा प्रहर आरम्भ हो, तब प्रयोग का **अनुष्ठान** करे। **शुभ समय** में आसन पर बैठकर **आसन-शुद्ध्यादि-पूर्वक प्राणायाम, दिग्बन्धन** आदि कर **ऋष्यादि-षडङ्ग-न्यास** करे। फिर अपने सामने **घृत का एक दीपक** जला कर रखे। उसकी ज्योति में **देवता का आवाहन** कर उसका **पञ्चोपचारों से पूजन** करे। इसके बाद **मूल-मन्त्र का एक सौ आठ (१०८) बार जप** करे। तब '**कर्पूर-स्तोत्र**' के पहले श्लोक से लेकर अन्तिम श्लोक तक **अनुलोम पाठ** करे और फिर **विलोम पाठ** करे। यथा-

पहले '**कर्पूरं मध्यमान्त्य-स्वर-पर-रहितं सेन्दु-वामाक्षि-युक्तम्०**' इत्यादि पहले श्लोक से लेकर '**कुरङ्गाक्षी-वृन्दं तमनुसरति प्रेम-तरलम्०**' इत्यादि अन्तिम श्लोक तक **अनुलोम पाठ** करे। फिर '**कुरङ्गाक्षी-वृन्दं०**' इत्यादि अन्तिम श्लोक से '**कर्पूरं मध्यमान्त्य०**' इत्यादि पहले श्लोक तक **विलोम पाठ** करे। यह **एक आवृत्ति** हुई।

इस प्रकार **अनुलोम-विलोम-पूर्वक तीन बार** समस्त **कर्पूर-स्तोत्र** का पाठ करके **मूल-मन्त्र** का पुनः **१०८ बार जप** करे। अन्त में **दीप-स्थित देवता का विसर्जन** करे।

कर्पूर-स्तोत्र के **पुरश्चरण** का एक विधान साधकों में और भी प्रचलित है, जो कहीं लिखा हुआ नहीं मिलता। इस विधान के अनुसार उपर्युक्त **एक अयुत** का **पुरश्चरण** न करके केवल बाद में लिखे **अनुलोम-विलोम-पाठात्मक प्रयोग** को ही **२१ दिन** तक किया जाता है, इस संशोधन के साथ कि **दीपक में देवता का आवाहन-पूजन** न करके **इष्ट-देवता का प्रति-दिन विधि-वत् चक्र-पूजन** करते हैं और उसी पूजन के अन्तर्गत **तत्त्व-शोधन** के बाद **कर्पूर-स्तोत्र का पाठ** करते हैं। इस प्रकार **२१ दिन का पुरश्चरण** पूरा होने पर **नौ कन्याओं** को भोजन कराते हैं। इस विधान के द्वारा अनेक लोगों ने अपनी **मनो-कामना** पूर्ण की है और कर रहे हैं।

***

सिंहावलोकन

१-मन्त्रोद्धार-प्रसङ्ग

'श्रीकाली-कर्पूर-स्तोत्र' की मुख्य विशेषताओं में से एक यह है कि इससे **दक्षिणा कालिका** का मन्त्रोद्धार ज्ञात होता है। इसके अतिरिक्त **महा-देवी के ध्यान, यन्त्र, साधना** और **स्वरूप** का विवरण भी इससे ज्ञात होता है। यही नहीं, **दक्षिणा कालिका** के सभी **मुख्य-मुख्य मन्त्र** इसमें निहित हैं। **श्लोक २१** की प्रथम पंक्ति ध्यान देने योग्य है, उसमें लिखा है–**इदं स्तोत्रं मातस्तव, 'मनु-समुद्धारण-जनुः।'** अर्थात् यह स्तोत्र **महा-देवी** के **मन्त्रोद्धार** को प्रकट करता है।

दक्षिणा कालिका के अनेक मन्त्रों में सर्व-श्रेष्ठ मन्त्र वह है, जो **'विद्या-राज्ञी'** नाम से प्रसिद्ध है। इस मन्त्र में **२२ अक्षर** (द्वा-विंशाक्षरी) हैं। यह **महा-देवी दक्षिणा कालिका** के स्वरूप का सम्पूर्ण और वास्तविक प्रतीक हमारे सम्मुख रखता है। **कर्पूरादि स्तोत्र** के **प्रथम पाँच श्लोकों** से यह **'विद्या-राज्ञी'** मन्त्र उपस्थित होता है। यथा–

प्रथम श्लोक से–**क्रीं क्रीं क्रीं** (३ अक्षर)।

द्वितीय श्लोक से–**हूँ हूँ** (२ अक्षर)।

तृतीय श्लोक से–**ह्रीं ह्रीं** (२ अक्षर)।

चतुर्थ श्लोक से–**दक्षिणे कालिके** (६ अक्षर)।

पञ्चम श्लोक से–**क्रीं क्रीं क्रीं हूँ हूँ ह्रीं ह्रीं स्वाहा** (९ अक्षर)।

इस प्रकार पहले के पाँच श्लोकों से **२२ अक्षरों** का सम्पूर्ण **'विद्या-राज्ञी' मन्त्र** उपलब्ध होता है। इसके बाद छठे श्लोक से अन्य मन्त्रों का उद्धार प्राप्त होता है। ये मन्त्र उतने महत्त्व के नहीं हैं और एक अक्षर से लेकर नौ, पन्द्रह तथा इक्कीस अक्षरों तक के मिलते हैं।

उपर्युक्त मन्त्रोद्धार **कालिका श्रुति, निरुत्तर तन्त्र** और अन्य **तन्त्रों** के अनुसार किया गया है। कई विद्वानों ने इन **तन्त्रों** की सहायता नहीं ली। फलतः उन्होंने दूसरे प्रकार से **मन्त्रोद्धार** निकाले हैं। उनमें से कुछ ने पहले श्लोक से **एकाक्षरी**, दूसरे-तीसरे से **दो द्व्यक्षरी**, पाँचवें से **नवाक्षरी** और इसी प्रकार अन्य श्लोकों से अमुकाक्षरी मन्त्रों का उद्धार-क्रम बताया है। इस क्रम का विरोध यह कह कर किया गया है कि ऐसे कई वचन **तन्त्रों** में मिलते हैं, जिनसे यह उद्धार भ्रम-पूर्ण प्रकट होता है। यथा–

'अथ हैनम् ब्रह्म-रन्ध्रे ब्रह्म-स्वरूपिणीम् आप्नोति वृहद्भानुजायां उच्चरेत्'

–कालिकोपनिषद्, सूक्त १।

'अथ वक्ष्ये कुलेशानि!, दक्षिणा-कालिका-मनुम्।
सर्व-मन्त्र-मयी विद्या, सृष्टि-स्थित्यन्त कारिणी।।'

–निरुत्तर तन्त्र, द्वितीय अध्याय।

'अथ सर्वाम् विद्याम् प्रथमं एकं द्वयं वा त्रयं नाम-त्रय-पुटितं वा कृत्वा जपेत्'

–कालिकोपनिषद्।

उक्त उद्धरणों से स्पष्ट है कि प्रारम्भ के पाँच श्लोकों में २२ **अक्षरोंवाला मन्त्र** दिया है और तब अन्य मन्त्र आते हैं। यहाँ एक और बात का उल्लेख करना युक्त होगा। वह यह कि **महा-काल** ने २२ **श्लोकों** में यह स्तव लिखा है, न २२ से अधिक, न कम। इस संख्या से भी **मन्त्रोद्धार का पूर्वोक्त क्रम** अधिक ठीक ज्ञात होता है। यही नहीं, **दक्षिणा कालिका** के **क्रम-स्तव** से भी यही बात प्रतिपादित होती है। **क्रम-स्तव** इस प्रकार है–

त्वदीय-बीज-त्रयमेतदम्ब!, जपन्ति सिद्धास्तु विमुक्ति-हेतोः।
तदेव मातस्तव पाद-पद्मगा, भवन्ति सिद्धाश्च दिन-त्रयेऽपि।।१।।
त्वदीय-कूर्च-द्वय-जापकत्वात्, सुरासुरेभ्योऽपि भवेच्च पूज्यः।
धनित्वं पाण्डित्यं लभन्ति सर्वे, किं वापरं देवि! परापराख्ये।।२।।
त्वदीय-लज्जा-द्वय-जापकत्वाद्, भवेन्महेशानि! चतुर्थ-सिद्धिः।
दया-समुद्रस्य वर-प्रसादाद्, भवाधिपत्यं लभते नरेशः।।३।।
ततः स्व-नाम्नः शृणु मातरेतत्, फलं चतुर्वर्गं मनन्ति सन्तः।
बीज-त्रयं वै पुनरप्युपास्य, सुराधिपत्यं लभते मुनीन्द्रः।।४।।
पुनस्तथा कूर्च-युगं जपन्ति, भवन्ति सिद्धाः नरसिंह-रूपाः।
ततोऽपि लज्जा-द्वय-जापकत्वात्, लभन्ति सिद्धिं मनसा जनास्ते।
अन्ते पदं क्षिप्य विभा विभावसोः, तन्मन्त्रमुद्धारमिदं वदन्ति।।५।।

यह **मन्त्रोद्धार-प्रकरण** हुआ। इस सम्बन्ध में यहाँ यह बताना भी उचित होगा कि इस स्तोत्र से **दक्षिणा कालिका** के अतिरिक्त **भगवती** तारा और **त्रिपुर-सुन्दरी** के भी **मन्त्रोद्धार** ज्ञात होते हैं और तत्सम्बन्धी साधना का भी परिचय मिलता है।

२-साधना-विषय

अब पहले यह लिख देना ठीक होगा कि इस स्तोत्र के किस श्लोक में कौन विषय छिपा है। तब अन्य विवरण देने में सुविधा होगी। इस प्रसङ्ग को थोड़े में स्पष्ट रूप से समझने के लिए निम्नाङ्कित तालिका बड़ी सहायक होगी–

विषय	श्लोक-संख्या	विषय	श्लोक-संख्या
ध्यान	१, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, ११	मांस	१९
यन्त्र	१८	मैथुन	१०
साधना	१०, ११, १५, १६, १८, १९, २०	फल-श्रुति	२१, २२
मद्य	१३	केवल स्तुति	९, १२, १४

१०, १५-१८ और २०–इन छः श्लोकों से **वीराचार-साधना** पर प्रकाश पड़ता है। यह साधना **वीर-भाववाले अभिषिक्त साधकों** के लिए **तन्त्र-शास्त्र** में निर्दिष्ट है। पश्चाचार के माननेवालों के लिए इस

साधना का सर्वथा निषेध है। इस स्तोत्र के २० वें श्लोक के सम्बन्ध में कुछ लोग कहते हैं कि इसका पूर्वार्द्ध **पश्चाचारी साधकों** के लिए और उत्तरार्द्ध **वीराचारियों** के लिए लिखा गया है। किन्तु यह कथन बिलकुल गलत है। सच्ची बात तो यह है कि उक्त श्लोक **वीराचारी साधकों** के लिए **दिवस** और **रात्रि-काल** के अनुकूल साधन-क्रम निर्दिष्ट करता है। २० वाँ श्लोक यह है–

वशी लक्षं मन्त्रं प्रजपति हविष्याशन-रतो।
दिवा मातुर्युष्मच्चरण-युगल-ध्यान-निपुणः।।
परं नक्तं नग्नो निधु-वन-विनोदेन च मनुम्।
जपेल्लक्षं स स्यात् स्मर-हर-समानः क्षिति-तले।।

अर्थात् हे **मातः**! तेरे **चरण-कमलों के ध्यान में कुशल जितेन्द्रिय साधक** दिन में **हविष्याशी** रहकर **लक्ष बार मन्त्र का जप** करता है। तदनन्तर रात्रि में नग्न होकर निधु-वन-विनोद (**निर्विकार** रहकर) से **लक्ष बार मन्त्र-जप** करता है। वह साधक पृथ्वी पर **काम-जयी भगवान् शङ्कर** के समान होता है।

यह **साधन-क्रम** पूरा-का-पूरा केवल **वीराचारियों** के लिए निर्दिष्ट हुआ है। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं किया जा सकता। फिर भी प्रमाण के लिए यहाँ कुछ उद्धरण दिए जाते हैं–

नक्तं भोजी हविष्यान्नं, जपेत् विद्यां दिवा शुचिः।
द्वि-वासाः सर्वथा वीरो, ब्रह्मचारी भवेत् सदा।।
रात्रौ सम्पूजयेद् देवीं, कुलाचार - क्रमेण तु।
द्वि-जन्मनां तु सर्वेषां, द्विधा विधिः इहोच्यते।।

–कौलावली-निर्णय।

शाम्भव-दीक्षासु रतः शाक्तेषु दिवा ब्रह्मचारी,
रात्रौ नग्नः सदा मैथुनासक्त-मानसः जप-पूजादि-नियमं कुर्याद्।

–कालिकोपनिषद्।

उन्मुख्याः कालिकायाश्च, विशेषः कथ्यतेऽधुना।
दिवसे ब्रह्मचर्येण, स्वीय-संख्या-जपं चरेत्।
रात्रौ मांसासवैर्मत्स्यैर्मुद्राभिर्मैथुनोद्भवैः।।

–कौलावली-निर्णय।

पशु-भाव-रतो मन्त्री*, **दिवा लक्ष-जपं चरेत्।** (* वीराचारी साधक)
स्वाचार-निरतो वीरो, रात्रौ लक्ष-जपं चरेत्।

–स्वतन्त्र तन्त्र।

ऐसे अनेक उद्धरण दिए जा सकते हैं। इन सबसे यही स्पष्ट होता है कि **वीराचारी साधक** को दिवस-काल में एक ब्रह्मचारी के समान नियम-पालक होकर रहना पड़ता है और **रात्रि में कुलाचारानुसार साधना** करने का अवसर मिलता है। इस स्पष्टीकरण से यह सिद्ध हो जाता है कि **श्रीकाली-कर्पूर-स्तोत्र** का २०वाँ श्लोक **वीराचार की साधना** पर ही प्रकाश डालता है।

इस प्रसङ्ग में एक महत्त्व की बात और है। वह यह कि **दक्षिणा कालिका** की साधना में **पश्चाचारी** के लिए तो कोई स्थान ही नहीं है। **निरुत्तर तन्त्र** में साफ-साफ लिखा है–

दिव्य-भावं वीर-भावं, बिना कालीं प्रपूजयेत्।
पूजने नरकं याति, तस्य दुःखं पदे पदे।।
पशु-भाव-रतो देवि!, यदि कालीं प्रपूजयेत्।
रौरवं नरकं याति, यावद् आहूत-सम्प्लवम्।।

अर्थात् **दिव्य** और **वीर-भाव** के बिना **काली का पूजन** करने से पूजक कदम-कदम पर दुःख पाता है और अन्त में नरक को जाता है। यदि कोई व्यक्ति, जो **पशु-भाव** में है, **काली** को पूजता है, तो वह महा-प्रलय तक के लिए रौरव नरक में पड़ता है।

अतएव २० वें श्लोक के सम्बन्ध में **पशु-भाव** का उल्लेख करना निरी मूर्खता ही है।

१-८, ११, २० (प्रथम चरण) और २१ (मध्य-रात्रि को छोड़कर)–ये ११ श्लोक देवता के **मन्त्र-जप** तथा **ध्यान** से सम्बन्ध रखते हैं। यह **जप** और **ध्यान–पशु-भावावलम्बी** भी कर सकते हैं। ९, १२, १३ और १४ वें श्लोकों में **स्तुति** है तथा २१-२२ वाँ **फल-श्लोक** है। **फल-श्लोक** में, जैसी कि परिपाटी है, यह वर्णन किया जाता है कि **स्तव का पाठ** करने से क्या-क्या फल मिलते हैं।

१०, १५-१८ और २० वें श्लोक का उत्तरार्द्ध–इन छः श्लोकों में **लता-साधन** का विवरण है। इस साधना की शक्ति साधारणतया अपनी विवाहित पत्नी ही होती है, जो **'स्व-शक्ति'** या **'आद्या-शक्ति'** की विशिष्ट उपाधियों से शास्त्र में स्थान-स्थान पर उल्लिखित की जाती है। साधक की विवाहित पत्नी ही उसकी **आद्या शक्ति** है और उसके सहयोग से ही उसे अपनी साधना सम्पन्न करना चाहिए। लिखा भी है–

आद्या शक्तिः स्व-दाराः स्यात्, तामेवाश्रित्य साधयेत्।

उसी के साथ वह **शक्ति-साधना** की जाती है, जिसका लक्ष्य है **आत्म-संयम की उपलब्धि**। इस साधना से साधक की बहिर्गमन करनेवाली शक्तियाँ **अन्तर्मुखी** हो जाती हैं और वह शीघ्र ही **निवृत्ति-भाव** को ग्रहण कर लेने में समर्थ होता जाता है। **कौलिकार्चन-दीपिका** में ठीक ही कहा है कि–

आद्या-शक्तिं बिना पूजा, अभिचाराय कल्पते।

आद्या-शक्ति के बिना पूजा सर्वथा कु-कृत्य है। **पर-शक्ति** के सहयोग की अनुमति केवल उस **'सिद्ध'** के लिए शास्त्र में दी गई है, जो अपनी **वासनाओं पर पूर्ण विजय** प्राप्त कर चुका हो। **प्राण-तोषिणी तन्त्र** में लिखा है कि–

स्व-शक्तौ सिद्धिमाप्नुयात्, पर-शक्तौ तदा जपेत्।

अर्थात् अपनी शक्ति के सहयोग से जब सिद्धि प्राप्त कर ले, तब दूसरी शक्ति के साथ **जप** करे। इसी प्रकार **निरुत्तर तन्त्र** में कहा है कि–**सिद्ध-मन्त्री कुलाचारे, पर-योषाम् प्रपूजयेत्** । अर्थात् वह साधक, जो **सिद्ध** है, **कुलाचार** में दूसरी स्त्री का पूजन कर सकता है।

यहाँ **पर-शक्ति** से दो तात्पर्य हैं। एक तो अन्य स्त्री और दूसरे परम स्त्री, जो शरीर में **कुण्डलिनी** शक्ति के रूप में स्थित है। **सिद्ध मन्त्री** का निर्देश इस दूसरी (**कुण्डलिनी**) के सम्बन्ध से ही किया गया है। ऐसा भी कहा जाता है, जैसा कि **महा-निर्वाण तन्त्र** में लिखा है कि **पर-शक्ति** यदि अविवाहिता है, तो उसका वैदिक या शैव विधि से विवाह करना आवश्यक है और यदि वह विवाहिता है तथा उसका पति स्वर्गवासी हो चुका है, तो शैव विधि से उसका विवाह होना चाहिए। इसके अतिरिक्त किसी कर्म की नैतिकता उस भावना पर निर्भर है, जिससे प्रेरित होकर वह किया जाता है। जैसा कि **कौलावली निर्णय** कहती है–

अतएव यदा यस्य, वासना कुत्सिता भवेत्।
तदा दोषाय भवति, नान्यथा दूषणं क्वचित्।।

अर्थात् जब किसी व्यक्ति की **भावना** बुरी होती है, तभी उसका **कर्म** भी बुरा माना जाता है, अन्यथा नहीं। भिन्न-भिन्न भावनाओं के साथ किए गए कर्म के उदाहरण में यह खूब कहा गया है–

भावेन चुम्बिता कान्ता, भावेन दुहितानम्।

अर्थात् पत्नी और बेटी का मुख-चुम्बन करते समय एक ही व्यक्ति की भावनाएँ दोनों अवसरों पर सर्वथा भिन्न-भिन्न ही होती हैं। फिर **तन्त्रसार** में लिखा है कि–

लिङ्ग - योनि - रतो मन्त्री रौरवं व्रजेत् ।

अर्थात् काम-वासना में लिप्त साधक रौरव नरक को प्राप्त करता है। **आचार-भेद-तन्त्रानुसार–**

वामाचारो भवेत् तत्र, वामा भूत्वा यजेत् पराम्।

अर्थात् **वामाचार** वही है, जहाँ साधक स्वयं **स्त्री-भाव** को ग्रहण कर **स्त्री की पूजा** कर सके। यह इस सिद्धान्त पर कि **पूजक** को **पूज्य** के भाव को ग्रहण करके **पूजन** में निरत होना चाहिए। **स्त्री-देवता** है और **परम शक्ति** की प्रतीक। अतएव **पूज्या शक्ति** होने से कदापि भोग की पात्र नहीं है।

१५ और १६ वें श्लोकों में उन लोगों की साधना का वर्णन है, जो सिद्ध नहीं हैं।

१०, १७ और १८ वें श्लोक साधक और सिद्ध दोनों से सम्बन्ध रखते हैं।

ऐसी साधना से **सबसे कठिन पाश** को तोड़ डालने का उद्योग किया जाता है और इसके साथ ही **कर्म** और **पुनर्जन्म** के बीजों के भी नाश का प्रयत्न होता है। वह **शिव** के समान **स्मर (कामदेव)** का नाशक बनता है और स्वयं **शिव** ही बन जाता है। ४, १८ और २० वें श्लोक साधना के इसी परिणाम को स्पष्ट रूप से बताते हैं। दूसरे श्लोकों में यह बताया गया है कि जो साधक **देवी का पूजन** लगन-पूर्वक करते हैं, उन्हें इस जगत् में **भौतिक** और **बौद्धिक** दोनों रूपों में महत्ता प्राप्त होती है, वे सब पुरुषों से श्रेष्ठ होते हैं और सब निधियों पर उनका अधिकार होता है तथा मृत्यु होने पर वे **परम पद** या **निर्वाण** को प्राप्त करते हैं।

१९ वाँ श्लोक **काली** के प्रति **पशु** एवं **नर-बलि** का उल्लेख करता है, परन्तु उक्त सब बातों से यह निष्कर्ष निकलता है कि इस **कर्पूरादि-स्तोत्र** का अर्थ स्थूल ही नहीं, **सूक्ष्म-भाव-परक** भी है। उदाहरणार्थ **पशु** और **नर-बलि** से तात्पर्य क्रमशः **भोग** और **अहङ्कार** के विनाश से है।

***

श्रीकाली-कर्पूर-स्तोत्रम्

विनियोग–ॐ अस्य श्रीकाली-कर्पूर-स्तव-राजस्य श्रीमहा-काल ऋषिः, गायत्री छन्दः, श्रीदक्षिणा-कालिका देवता, हलो वीजानि, स्वराः शक्तयः, अव्यक्तं कीलकं, श्रीदक्षिणा-कालिका देवता, अमुक-कामना-सिद्धये पाठे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास–श्रीमहा-काल-ऋषये नमः शिरसि (अंगुष्ठ से)। गायत्री-छन्दसे नमः मुखे (मध्यमा-अनामा से)। श्रीदक्षिणा-कालिका-देवतायै नमः हृदि (तर्जनी-मध्यमा-अनामा-कनिष्ठा से)। हल्भ्यो वीजेभ्यो नमः गुह्ये (अंगुष्ठ-अनामा से)। स्वरेभ्यो शक्तिभ्यो नमः पादयोः (मध्यमा से)। अव्यक्ताय कीलकाय नमः सर्वाङ्गे (दोनों हस्त-तलों से)। अमुक-कामना-सिद्धये पाठे विनियोगाय नमः अञ्जलौ (दोनों हाथों की अञ्जलि द्वारा पुष्पादि समर्पण)।

कर-न्यास–क्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः, क्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा, क्रूं मध्यमाभ्यां वषट्, क्रैं अनामिकाभ्यां हुम्, क्रौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्, क्रः करतल-करपृष्ठभ्यां फट् ।

अङ्ग-न्यास–क्रां हृदयाय नमः, क्रीं शिरसे स्वाहा, क्रूं शिखायै वषट्, क्रैं कवचाय हुम्, क्रौं नेत्र-त्रयाय वौषट्, क्रः अस्त्राय फट् ।

मानस-पूजन कर मूल-स्तोत्र का पाठ करे। यथा–

कर्पूरं मध्यमान्त्य-स्वर-पर-रहितं सेन्दु-वामाक्षि-युक्तम्,
वीजं ते मातरेतत् त्रिपुर-हर-वधु! त्रिः कृतं ये जपन्ति।
तेषां गद्यानि पद्यानि च मुख-कुहरादुल्लसन्त्येव वाचः,
स्वच्छन्दं ध्वान्त-धाराधर-रुचि-रुचिरे! सर्व-सिद्धिं गतानाम्।।१।।

ईशानः सेन्दु - वाम - श्रवण - परि - गतो वीजमन्यन्महेशि!,
द्वन्द्वं ते मन्द-चेता यदि जपति जनो वारमेकं कदाचित्।
जित्वा वाचामधीशं धनदमपि चिरं मोहयन्नम्बुजाक्षी–
वृन्दं चन्द्रार्द्ध - चूडे! प्रभवति स महा - घोर - शावावतंसे।।२।।

ईशो वैश्वानरस्थः शश - धर- विलसद् - वाम - नेत्रेण युक्तो,
वीजं ते द्वन्द्वमन्यद्-विगलित-चिकुरे कालिके! ये जपन्ति।
द्वेष्टारं घ्नन्ति ते च त्रिभुवनमभितो वश्य - भावं नयन्ति,
सृक्क - द्वन्द्वास्त्र - धारा - द्वय - धर-वदने! दक्षिणे कालिके च।।३।।

ऊर्ध्वं वामे कृपाणं कर-कमल-तले छिन्न-मुण्डं ततोऽधः,
सव्येऽभीतिं वरं च त्रि-जगदघ-हरे! दक्षिणे कालिके! च।
जप्त्वैतन्नाम ये वा तव मनु - विभवं भावयन्त्येतदम्ब,
तेषामष्टौ करस्थाः प्रकटित - रदने! सिद्धयस्त्र्यम्बकस्य।।४।।

वर्गाद्यं वह्नि-संस्थं विधु-रति-वलितं तत्-त्रयं कूर्च-युग्मम्,
लज्जा-द्वन्द्वं च पश्चात् स्मित-मुखि तदधष्ठ-द्वयं योजयित्वा।
मातर्ये वा जपन्ति स्मर-हर-महिले! भावयन्तः स्वरूपम्,
ते लक्ष्मी-लास्य-लीला-कमल-दल-दृशः काम-रूपा भवन्ति।।५।।

प्रत्येकं वा द्वयं वा त्रयमपि च परं वीजमत्यन्त-गुह्यम्,
त्वन्नाम्ना योजयित्वा सकलमपि सदा भावयन्तो जपन्ति।
तेषां नेत्रारविन्दे विहरति कमला वक्त्र-शुभ्रांशु-बिम्बे,
वाग्देवी देवि! मुण्ड-स्रगतिशय-लसत्कण्ठि पीन-स्तनाढ्ये।।६।।

गतासूनां बाह - प्रकर - कृत - काञ्ची - परि - लसन्,
नितम्बां दिग् - वस्त्रां त्रिभुवन-विधात्रीं त्रि-नयनाम्।
श्मशानस्थे तल्पे शव - हृदि महा - काल - सुरत-
प्रसक्तां त्वां ध्यायन् जननि! जड - चेता अपि कविः।।७।।

शिवाभिर्घोराभिः शव - निवह - मुण्डास्थि - निकरैः,
परं सङ्कीर्णायां प्रकटित - चितायां हर - वधूम्।
प्रविष्टां सन्तुष्टामुपरि सुरतेनाति - युवतीम्,
सदा त्वां ध्यायन्ति क्वचिदपि न तेषां परिभवः।।८।।

वदामस्ते किं वा जननि! वयमुच्चैर्जड - धियो,
न धाता नापीशो हरिरपि न ते वेत्ति परमम्।
तथापि त्वद्भक्तिर्मुखरयति चास्माकमसिते,
तदेतत् क्षन्तव्यं न खलु पशु - रोषः समुचितः।।९।।

समन्तादापीन - स्तन - जघन - धृग् - यौवन - वती,
रतासक्तो नक्तं यदि जपति भक्तस्तव मनुम्।

विवासास्त्वां ध्यायन् गलित - चिकुरस्तस्य वशगाः,
समस्ताः सिद्धौघा भुवि चिर - तरं जीवति कविः।।१०।।

समाः स्वस्थी - भूतां जपति विपरीतां यदि सदा,
विचिन्त्य त्वां ध्यायन्नतिशय - महा - काल - सुरताम्।
तदा तस्य क्षोणी - तल - विहरमाणस्य विदुषः,
कराम्भोजे वश्या हर - वधु! महा - सिद्धि - निवहाः।।११।।

प्रसूते संसारं जननि! जगतीं पालयति या,
समस्तं क्षित्यादि प्रलय - समये संहरति च।
अतस्त्वां धाताऽपि त्रि - भुवन - पतिः श्रीपतिरहो,
महेशोऽपि प्रायः सकलमपि किं स्तौमि भवतीम्।।१२।।

अनेके सेवन्ते भवदधिक - गीर्वाण - निवहान्,
विमूढास्ते मातः! किमपि नहि जानन्ति परमम्।
समाराध्यामाद्यां हरि - हर - विरिञ्च्यादि - विबुधैः,
प्रपन्नोऽस्मि स्वैरं रति - रस - महानन्द - निरताम्।।१३।।

धरित्री कीलालं शुचिरपि समीरोऽपि गगनम्,
त्वमेका कल्याणी गिरिश - रमणी कालि! सकलम्।
स्तुतिः का ते मातस्तव करुणया मामगतिकम्,
प्रसन्ना त्वं भूया भवमनु न भूयान्मम जनुः।।१४।।

श्मशानस्थः सुस्थो गलित - चिकुरो दिक् - पट - धरः,
सहस्त्रं त्वर्काणां निज - गलित - वीर्येण कुसुमम्।
जपँस्त्वत् - प्रत्येकं मनुमपि तव ध्यान - निरतो,
महा - कालि! स्वैरं स भवति धरित्री - परिदृढः।।१५।।

गृहे सम्मार्जन्या परि - गलित - वीर्यं हि चिकुरम्,
समूलं मध्याह्ने वितरति चितायां कुज - दिने।
समुच्चार्य प्रेम्णा मनुमपि सकृत् कालि! सततम्,
गजारूढो याति क्षिति - परिवृढः सत् - कवि - वरः।।१६।।

सु - पुष्पैराकीर्णं कुसुम - धनुषो मन्दिरमहो,
पुरो ध्यायन् ध्यायन् जपति यदि भक्तस्तव मनुम्।
स गन्धर्व - श्रेणी - पतिरपि कवित्वामृत - नदी–
नदीनः पर्यन्ते परम - पद - लीनः प्रभवति।।१७।।

त्रि - पञ्चारे पीठे शव - शिव - हृदि स्मेर - वदनाम्,
महा - कालेनोच्चैर्मदन - रस - लावण्य - निरताम्।
समासक्तो नक्तं स्वयमपि रतानन्द - निरतो,
जनो यो ध्यायेत् त्वामयि जननि! स स्यात् स्मर - हरः।।१८।।

स - लोमास्थि स्वैरं पललमपि मार्जारमसिते,
परं चौष्ट्रं मैषं नर - महिषयोश्छागमपि वा।
बलिं ते पूजायामपि वितरतां मर्त्य - वसताम्,
सतां सिद्धिः सर्वा प्रतिपदमपूर्वा प्रभवति।।१९।।

वशी लक्षं मन्त्रं प्रजपति हविष्याशन - रतो,
दिवा मातर्युष्मच्चरण - युगल - ध्यान - निपुणः।
परं नक्तं नग्नो निधु - वन - विनोदेन च मनुम्,
जपेल्लक्षं स स्यात् स्मर - हर - समानः क्षिति - तले।।२०।।

फल-श्रुति

इदं स्तोत्रं मातस्तव मनु - समुद्धारण - जनुः,
स्वरूपाख्यं पादाम्बुज - युगल - पूजा - विधि - युतम्।
निशार्द्धे वा पूजा - समयमधि वा यस्तु पठति,
प्रलापस्तस्यापि प्रसरति कवित्वामृत - रसः।।२१।।

कुरङ्गाक्षी - वृन्दं तमनुसरति प्रेम - तरलम्,
वशस्तस्य क्षोणी - पतिरपि कुबेर - प्रतिनिधिः।
रिपुः कारागारं कलयति च तं केलि - कलया,
चिरं जीवन् मुक्तः स भवति च भक्तः प्रति - जनुः।।२२।।

।।श्रीमहाकाल-विरचितं "श्रीदक्षिणा-कालिकायाः स्वरूपाख्यं स्तोत्रम्"।।

श्री काली-कर्पूर-स्तोत्रानुवाद

माँ! '**कर्पूर**'-शब्द के प्रथमाक्षर में '**वह्नि स-शशि ई-कार**'–
लगा, **पुरान्तक-पत्नि**! बीज तव जपते जो साधक त्रय वार।।
उनके मुख से **गद्य-पद्य**-मय बहता है स्वच्छन्द प्रवाह।
श्याम-मेघ-छवि-लसिते! उनको मिलता **सिद्धि-पुञ्ज** सोत्साह।।१

शङ्कर, **वाम-श्रवण**, **शशधर**-युत बीज **महेशि**! अन्य तव द्वन्द्व।
अर्ध-चन्द्र-चूड़े! जपता यदि एक बार भी जो मति-मन्द।।
वह **वाचस्पति**, **घनाधीश** को जीत, बनाता है अति दीन।
चिर प्रभु होता **शावाभरणे**! कमलाक्षी-गण कर स्वाधीन।।२

ईश वह्नि-युत **वाम-नेत्र** त्यों **अर्ध-चन्द्र** से शोभावान।
विगलित-केशे, **कालि**, **दक्षिणे**! जपते तव युग वीज प्रधान।।
वे त्रि-भुवन को वशीभूत कर वैरि-जनों का करते नाश।
रुधिर-धार-शोभित-मुख कमले!, एवं पाते विभव-विलास।।३

वाम भाग के कर-कमलों में **छिन्न मुण्ड** लस रही **कृपाण**।
त्रिभुवन-पाप-विनाशिनि! अम्बे! दक्षिण पाणि **अभय-वरदान**।।
ध्याते जो तव विमल-मूर्ति '**दक्षिणे कालिके**' जपते नाम।
शिव की सर्व-सिद्धियाँ पाते **प्रकटित-रदने**! वे अभिराम।।४

वह्नि, **बिन्दु**, **रति**-युत '**क**'-**वर्ण-त्रय**, **युग्म-कूर्च**, **युग-परा** प्रमाण।
मन्द-स्मित-मुखि! **ठ-युग** लगाकर तव स्वरूप का धर फिर ध्यान।।
मातः, **स्मर-हर-महिले**! जपते जो नित तव साधक स-ज्ञान।
रमा-लास्य-लीला-वारिज-दृग, **काम-रूप** होते श्री-मान्।।५

कण्ठ-मुण्ड-माला-धारिणि! **हे पीन-कुचे**! त्रय, युग, प्रत्येक।
गुह्य बीज तव नाम जोड़कर, भक्ति-युक्त जपते स-विवेक।।
उनके नेत्र-कमल में **कमला**, **चन्द्र-बिम्ब**-सम मुख में और–
देवि भारती! विहरण करतीं, होता अतः सिद्ध-शिरमौर।।६

तीन **नेत्रोंवाली हे** मातः! लोक त्रय तुम रचनेवाली।
काम-क्रोधादि मृत रिपु भुज से, कटि में काञ्ची लसनेवाली।
वस्त्र-हीन हो **शिव-शव हृत्** पर, रहतीं तुम तो मध्य **मसान**।
महाकाल से **रति युक्ता** तुम, ध्याकर मूढ़ बने मतिमान्।।७

घोर शिवा-योगिनियों से औ, **शव-मुण्डास्थि**-राशि-परिपूर्ण।
ज्वलित चिता-भू पर अतिशय जो यौवन के मद से आघूर्ण।।
रति-विपरीत-प्रसन्ना तुमको किसी अवस्था में धर ध्यान।
जपते सतत कभी न उनका होता है किञ्चित् अपमान।।८

जड़-मति हम कैसे कह सकते **जननि!** तुम्हारा तत्त्व महान।
देवि! त्वदीय विषय में **विधि, हरि, हर** भी जब रहते हैरान।।
विवश हमें वर्णन करने में करती यह तव भक्ति तथापि।
अतः दोष यह क्षमा कीजिए, उचित न पशु पर रोष कदापि।।९

पुष्ट जघन-कुच, यौवन-मद-दृगवाली, दिगम्बरा! सविशेष।
ध्यान तुम्हारा इस प्रकार जो करता हुआ भक्त वीरेश।।
मुक्त-केश यदि **रतासक्त** निशि जपता है तव मनु अत्यन्त।
सिद्ध-सङ्घ-वश में उसके, वह होता **कवि** चिर-जीवन-वन्त।।१०

महा-काल के सङ्ग निरन्तर **रति-विपरीतानन्द-विलग्न**।
जपते जो तव **मन्त्र-राज** को होकर ऐसे ध्यान-निमग्न।।
वे साधक इस पृथ्वी-तल पर विहरण करते हैं स्वच्छन्द।
तथा हस्त-गत **सकल सिद्धियाँ** उनको हो जातीं सानन्द।।११

जननि! तुम्हीं जग को रचती हो, पालन करतीं भले प्रकार।
क्षिति से **शिव** तक फिर करती हो, प्रलय-समय सबका संहार।।
हैं असमर्थ अतः **विधि, हरि, हर** भी करने में तव गुण-गान।
कैसे स्तवन तुम्हारा फिर मैं कर सकता अल्पज्ञ निदान?१२

सेवन करते बहुत मनुज हैं, तुमसे अधिक सुरों को मान।
मूढ़-बुद्धि वे, उन्हें न **मातः!** परम-तत्त्व का है कुछ ज्ञान।।
मैं **हरि-हर-विधि देवाराध्या**, रति-रस-महानन्द में लीन।
एक-मात्र तुम **आद्या** का ही रखता हूँ चरणाश्रय पीन।।१३

धरिणी, **अनिल**, **अनल** तुम ही हो, तुम्हीं **समीरण**, तुम **आकाश**।
शिव-सुन्दरि! कल्याणि! कालिके! एक तुम्हारा सकल विलास।।
तव नुति क्या? **माँ?** मुझ अगतिक पर कीजे निज करुणा सुविशाल।
हो प्रसन्न त्यों नष्ट कीजिए मेरा **जन्म-मरण का जाल**।।१४

चिता-भूमि में स्वस्थ-चित्त हो, **दिक्पट-धारी**, **विगलित-केश**।
स्वीय-वीर्य-युत अर्क-वृक्ष के सहस कुसुम का जो सविशेष।।
मन्त्र-राज जप, ध्यान निरत हो, करता हवन सुमन प्रत्येक।
होता वह निरपेक्ष धरा-मण्डल का बस अधिनायक एक।।१५

चाण्डालिनि-गृह केश-राशि का वीर्य-मूल युत जो स-विधान।
भौमवार को **अर्द्ध-रात्रि** पर करै चिता में आहुति दान-
एक बार स-प्रेम मन्त्र जप, वह हो गज-आरूढ़ सदैव-
विचरण करता, **क्षिति-पति** होता, होता **सत्कविराज** तथैव।।१६

शोभन रज-सुम-व्याप्त कुसुम-धनु-मन्दिर का सम्मुख धर ध्यान।
जपता है तव विद्या को यदि भक्ति-युक्त साधक धीमान।।
वह **गन्धर्व-नाथ**-सम होता **कवितामृत-सरि**-पारावार।
विलय-भाव पर-पद में उसका अन्त-समय निश्चित निर्धार।।१७

मातः! पञ्च-त्रिकोण पीठ पर **शव-शिव**-हृदयोपरि-आसीन।
मन्द-स्मित-मुखि, **महा-काल**-सँग प्रौढ़-सुरत-सुन्दरता-लीन।।
खुद भी निशि में **रतानन्द**-रत, **एक-चित्त** हो, धर तव ध्यान।
जो जन मनु जपता हो जाता वह **कामान्तक शम्भु**-समान।।१८

महिष, **उष्ट्र**, **मार्जार**, **मेष**, **नर**, **बकरे** का लोमास्थि-समेत।
देता तुम्हें मांस-बलि **श्यामे!** पूजन में जो जन तव हेतु।।
नई-नई 'बलबीर' अनुक्षण वीर-वृन्द वे निश्चय तूर्ण-
सर्व-सिद्धियाँ पाते, उनकी होती सकल कामना पूर्ण।।१९

हविष्यान्न-भोजी, **इन्द्रिय-जित**, दिन में मनु जपता है लक्ष।
धर कर ध्यान हृदय में **मातः!** तव **युग चरणाम्भोज** समक्ष।।
एवं निशि में वस्त्र-रहित हो, **रतानन्द-रत**, मन्त्र त्वदीय।
एक लक्ष सम्यक् जपता वह होता **शम्भु**-सदृश नमनीय।।२०

फल-श्रुति

मातः! स्तोत्र तुम्हारा यह दिखलाता **मन्त्रोद्धार**-प्रकार।
युग-पादाम्बुज-पूजा-विधि-युत तव स्वरूप का इसमें सार।।
अर्द्ध-रात्रि पर अर्चनान्त में करता है जो इसका **पाठ**।
उसकी साधारण वाणी से बहता **काव्य-सुधा-रस**-ठाठ।।२१

जातीं उसके पास स्वयं ही प्रेम-तरल मृग-नयनी बाल।
होता प्रतिनिधि वह **कुबेर** का, उसके वश होते **भू-पाल**।।
रिपु कारा में रहते, एवं होकर केलि-कला से युक्त-
चिरञ्जीवी हो, भक्त '**वीर**' वह होता **जन्म-जन्म में मुक्त**।।२२

***

माहात्म्य-निदर्शन

मनसा पठितं स्तोत्रं, वाचा वापि मनुं जपेत्।
उभयोर्निष्फलं देवि!, भिन्न - भाण्डोदकं यथा।।

हे देवि! स्तोत्र को जो मन में पढ़ता है और मन्त्र को जो वाणी से जपता है अर्थात् उच्च स्वर से जप करता है–इन दोनों को कोई फल नहीं मिलता, जैसे कि टूटे हुए बर्तन में जल नहीं ठहरता।–**विशुद्धेश्वर तन्त्र** के इस निर्देश के अनुसार '**श्रीकाली-कर्पूर-स्तोत्र**' का पाठ करनेवालों को सस्वर पाठ करना चाहिए। न बहुत ऊँचे स्वर में, न बहुत धीमे। साथ ही **पाठ** करते समय शरीर को हिलाना-डुलाना भी नहीं चाहिए। **आलस, जँभाई, लघु-शङ्का** आदि विकारों से अपने को मुक्त रखना चाहिए। इस प्रकार **सविधि पाठ** से ही कथित फल की प्राप्ति होती है–

यस्यैक-वार पठनात्, सर्वे विघ्नाः समाकुलाः।
नश्यन्ति दहने दीप्ते, पतङ्गा इव सर्वतः।।
गद्य-पद्य-मयी वाणी, तस्य गङ्गा-प्रवाह-वत्।
–काली-कुल-सर्वस्व।

महा-काल-रुद्रोदित-स्तोत्रमेतत्।
सदा-भक्ति-भावेन योऽध्येति भक्तः।।
नापन्न शोको न रोगो न मृत्युर्भवेत् ।
सिद्धिरन्ते चाप्नोति कैवल्य-लाभः।।
–महा-काल-संहिता।

२०८ श्री महा-काल-मनोरमायै नमः
२०९ श्री गारुड्यै नमः
२१० श्री विमलायै नमः
२११ श्री हंस्यै नमः
२१२ श्री योगिन्यै नमः
२१३ श्री रति-सुन्दर्यै नमः
२१४ श्री कपालिन्यै नमः
२१५ श्री महा-चण्डायै नमः
२१६ श्री विप्र-चित्तायै नमः
२१७ श्री कुमारिकायै नमः
२१८ श्री ईशान्यै नमः
२१९ श्री ईश्वर्यै नमः
२२० श्री ब्राह्मयै नमः
२२१ श्री माहेश्यै नमः
२२२ श्री विश्व-मोहिन्यै नमः
२२३ श्री एक-वीरायै नमः
२२४ श्री कुलानन्दायै नमः
२२५ श्री काल-पुत्र्यै नमः
२२६ श्री सदा-शिवायै नमः
२२७ श्री शाकम्भर्यै नमः
२२८ श्री नील-वर्णायै नमः
२२९ श्री महिषासुर-मर्दिन्यै नमः
२३० श्री कामदायै नमः
२३१ श्री कामिन्यै नमः
२३२ श्री कुल्लायै नमः
२३३ श्री कुरु-कुल्लायै नमः
२३४ श्री विरोधिन्यै नमः
२३५ श्री उग्रायै नमः
२३६ श्री उग्र-प्रभायै नमः
२३७ श्री दीप्तायै नमः
२३८ श्री प्रभायै नमः
२३९ श्री दंष्ट्रायै नमः
२४० श्री मनोजवायै नमः
२४१ श्री कल्प - वृक्ष - तलासीनायै नमः
२४२ श्री श्रीनाथ-गुरु-पादुकायै नमः
२४३ श्री अव्याज-करुणा-मूर्त्यै नमः
२४४ श्री आनन्द-घन-विग्रहायै नमः
२४५ श्री विश्व-रूपायै नमः
२४६ श्री विश्व-मात्रे नमः
२४७ श्री वज्रिण्यै नमः
२४८ श्री वज्र-विग्रहायै नमः
२४९ श्री अनघायै नमः
२५० श्री शाङ्कर्यै नमः
२५१ श्री दिव्यायै नमः
२५२ श्री पवित्रायै नमः
२५३ श्री सर्व-साक्षिण्यै नमः
२५४ श्री धनुर्वाण-गदा-हस्तायै नमः
२५५ श्री आयुधायै नमः
२५६ श्री आयुधान्वितायै नमः
२५७ श्री लोकोत्तरायै नमः
२५८ श्री पद्म-नेत्रायै नमः
२५९ श्री योग-मायायै नमः
२६० श्री जटेश्वर्यै नमः
२६१ श्री अनुच्चार्यायै नमः
२६२ श्री त्रिधायै नमः
२६३ श्री दृप्तायै नमः
२६४ श्री चिन्मय्यै नमः
२६५ श्री शिव-सुन्दर्यै नमः

२६६ श्री विश्वेश्वर्यै नमः
२६७ श्री महा-मेधायै नमः
२६८ श्री उच्छिष्टायै नमः
२६९ श्री विस्फुलिङ्गिन्यै नमः
२७० श्री चिदम्बर्यै नमः
२७१ श्री चिदाकारायै नमः
२७२ श्री अणिमायै नमः
२७३ श्री नील-कुन्तलायै नमः
२७४ श्री दैत्येश्वर्यै नमः
२७५ श्री देव-मात्रे नमः
२७६ श्री महा-देव्यै नमः
२७७ श्री कुश-प्रियायै नमः
२७८ श्री सर्व-देव-मय्यै नमः
२७९ श्री पुष्टायै नमः
२८० श्री भूष्यायै नमः
२८१ श्री भूत-पति-प्रियायै नमः
२८२ श्री महा-किरातिन्यै नमः
२८३ श्री साध्यायै नमः
२८४ श्री धर्मज्ञायै नमः
२८५ श्री भीषणाननायै नमः
२८६ श्री उग्र-चण्डायै नमः
२८७ श्री श्रीचाण्डाल्यै नमः
२८८ श्री मोहिन्यै नमः
२८९ श्री चण्ड-विक्रमायै नमः
२९० श्री चिन्तनीयायै नमः
२९१ श्री महा-दीर्घायै नमः
२९२ श्री अमृतायै नमः
२९३ श्री मृत-बान्धव्यै नमः
२९४ श्री पिनाक-धारिण्यै नमः
२९५ श्री शिप्रायै नमः
२९६ श्री धात्र्यै नमः
२९७ श्री त्रि-जगदीश्वर्यै नमः
२९८ श्री रक्तपायै नमः
२९९ श्री रुधिराक्ताङ्ग्यै नमः
३०० श्री रक्त-खर्पर-धारिण्यै नमः
३०१ श्री त्रिपुरायै नमः
३०२ श्री त्रिकूटायै नमः
३०३ श्री नित्यायै नमः
३०४ श्री श्रीनित्यायै नमः
३०५ श्री भुवनेश्वर्यै नमः
३०६ श्री हव्यायै नमः
३०७ श्री कव्यायै नमः
३०८ श्री लोक-गत्यै नमः
३०९ श्री गायत्र्यै नमः
३१० श्री परमायै नमः
३११ श्री गत्यै नमः
३१२ श्री विश्व-धात्र्यै नमः
३१३ श्री लोक-मात्रे नमः
३१४ श्री पञ्चम्यै नमः
३१५ श्री पितृ-तृप्तिदायै नमः
३१६ श्री कामेश्वर्यै नमः
३१७ श्री काम-रूपायै नमः
३१८ श्री काम-बीजायै नमः
३१९ श्री कलात्मिकायै नमः
३२० श्री ताटङ्क-शोभिन्यै नमः
३२१ श्री वन्द्यायै नमः
३२२ श्री नित्य-क्लिन्नायै नमः
३२३ श्री कुलेश्वर्यै नमः

३२४ श्री भुवनेश्यै नमः
३२५ श्री महा-राज्ञ्यै नमः
३२६ श्री अक्षरायै नमः
३२७ श्री अक्षरात्मिकायै नमः
३२८ श्री अनादि-बोधायै नमः
३२९ श्री सर्वज्ञायै नमः
३३० श्री सर्वायै नमः
३३१ श्री सर्व-तरायै नमः
३३२ श्री शुभायै नमः
३३३ श्री इच्छा-शक्त्यै नमः
३३४ श्री क्रिया-शक्त्यै नमः
३३५ श्री ज्ञान-शक्त्यै नमः
३३६ श्री सर्वाढ्यायै नमः
३३७ श्री शर्व-पूजितायै नमः
३३८ श्री श्रीमहा-सुन्दर्यै नमः
३३९ श्री रम्यायै नमः
३४० श्री राज्ञ्यै नमः
३४१ श्री श्रीपरमाम्बिकायै नमः
३४२ श्री राज-राजेश्वर्यै नमः
३४३ श्री भद्रायै नमः
३४४ श्री श्रीमत्-त्रिपुर-सुन्दर्यै नमः
३४५ श्री त्रि-सन्ध्यायै नमः
३४६ श्री इन्दिरायै नमः
३४७ श्री ऐन्द्र्यै नमः
३४८ श्री अजितायै नमः
३४९ श्री अपराजितायै नमः
३५० श्री भेरुण्डायै नमः
३५१ श्री दण्डिन्यै नमः
३५२ श्री घोरायै नमः
३५३ श्री इन्द्राण्यै नमः
३५४ श्री तपस्विन्यै नमः
३५५ श्री शैल-पुत्र्यै नमः
३५६ श्री चण्ड-घण्टायै नमः
३५७ श्री कूष्माण्डायै नमः
३५८ श्री ब्रह्म-चारिण्यै नमः
३५९ श्री कात्यायन्यै नमः
३६० श्री स्कन्द-मात्रे नमः
३६१ श्री काल-रात्र्यै नमः
३६२ श्री शुभङ्कर्यै नमः
३६३ श्री महा-गौर्यै नमः
३६४ श्री सिद्धि-दात्र्यै नमः
३६५ श्री नव-दुर्गायै नमः
३६६ श्री नभः-स्थितायै नमः
३६७ श्री सुनन्दायै नमः
३६८ श्री नन्दिन्यै नमः
३६९ श्री कृत्यायै नमः
३७० श्री महा-भागायै नमः
३७१ श्री महोज्ज्वलायै नमः
३७२ श्री महा-विद्यायै नमः
३७३ श्री ब्रह्म-विद्यायै नमः
३७४ श्री दामिन्यै नमः
३७५ श्री ताप-हारिण्यै नमः
३७६ श्री उत्थितायै नमः
३७७ श्री उत्पलायै नमः
३७८ श्री बाध्यायै नमः
३७९ श्री प्रमोदायै नमः
३८० श्री शुभदोत्तमायै नमः
३८१ श्री अतुल्यायै नमः

३८२ श्री अमूलायै नमः
३८३ श्री पूर्णायै नमः
३८४ श्री हंसारूढायै नमः
३८५ श्री हरि-प्रियायै नमः
३८६ श्री सुलोचनायै नमः
३८७ श्री विरूपाक्ष्यै नमः
३८८ श्री विद्युद्-गौर्यै नमः
३८९ श्री महार्हणायै नमः
३९० श्री काक-ध्वजायै नमः
३९१ श्री शिवाराध्यायै नमः
३९२ श्री शूर्प-हस्तायै नमः
३९३ श्री कृशाङ्गिन्यै नमः
३९४ श्री शुभ्र-केश्यै नमः
३९५ श्री कोटराक्ष्यै नमः
३९६ श्री विधवायै नमः
३९७ श्री पति-घातिन्यै नमः
३९८ श्री सर्व-सिद्धि-कर्यै नमः
३९९ श्री दुष्टायै नमः
४०० श्री क्षुधार्त्तायै नमः
४०१ श्री शिव-भक्षिण्यै नमः
४०२ श्री वर्गात्मिकायै नमः
४०३ श्री त्रि-कालज्ञायै नमः
४०४ श्री त्रि-वर्गायै नमः
४०५ श्री त्रिदशार्चितायै नमः
४०६ श्री श्रीमत्यै नमः
४०७ श्री भोगिन्यै नमः
४०८ श्री काश्यै नमः
४०९ श्री अविमुक्तायै नमः
४१० श्री गयेश्वर्यै नमः
४११ श्री सिद्धाम्बिकायै नमः
४१२ श्री सुवर्णाक्ष्यै नमः
४१३ श्री कोलाम्बायै नमः
४१४ श्री सिद्ध-योगिन्यै नमः
४१५ श्री देव-ज्योतिः-समुद्भूतायै नमः
४१६ श्री देव-ज्योतिः-स्वरूपिण्यै नमः
४१७ श्री अच्छेद्यायै नमः
४१८ श्री अद्भुतायै नमः
४१९ श्री तीव्रायै नमः
४२० श्री व्रतस्थायै नमः
४२१ श्री व्रत-चारिण्यै नमः
४२२ श्री सिद्धिदायै नमः
४२३ श्री धूमिन्यै नमः
४२४ श्री तन्व्यै नमः
४२५ श्री भ्रामर्यै नमः
४२६ श्री रक्त-दन्तिकायै नमः
४२७ श्री स्वस्तिकायै नमः
४२८ श्री गगनायै नमः
४२९ श्री वाण्यै नमः
४३० श्री जाह्नव्यै नमः
४३१ श्री भव-भामिन्यै नमः
४३२ श्री पतिव्रतायै नमः
४३३ श्री महा-मोहायै नमः
४३४ श्री मुकुटायै नमः
४३५ श्री मुकुटेश्वर्यै नमः
४३६ श्री गुह्येश्वर्यै नमः
४३७ श्री गुह्य-मात्रे नमः
४३८ श्री चण्डिकायै नमः
४३९ श्री गुह्य-कालिकायै नमः

४४० श्री प्रसूत्यै नमः
४४१ श्री आकुत्यै नमः
४४२ श्री चित्तायै नमः
४४३ श्री चिन्तायै नमः
४४४ श्री देवाहुत्यै नमः
४४५ श्री त्रय्यै नमः
४४६ श्री अनुमत्यै नमः
४४७ श्री कुह्वे नमः
४४८ श्री राकायै नमः
४४९ श्री सिनीवाल्यै नमः
४५० श्री त्विषायै नमः
४५१ श्री रसायै नमः
४५२ श्री सुवर्चायै नमः
४५३ श्री वर्चलायै नमः
४५४ श्री शार्व्यै नमः
४५५ श्री विकेशायै नमः
४५६ श्री कृष्ण-पिङ्गलायै नमः
४५७ श्री स्वप्नावत्यै नमः
४५८ श्री चित्र-लेखायै नमः
४५९ श्री अन्न-पूर्णायै नमः
४६० श्री चतुष्टयायै नमः
४६१ श्री पुण्य-लभ्यायै नमः
४६२ श्री वरारोहायै नमः
४६३ श्री श्यामाङ्ग्यै नमः
४६४ श्री शशि-शेखरायै नमः
४६५ श्री हरण्यै नमः
४६६ श्री गौतम्यै नमः
४६७ श्री मेनायै नमः
४६८ श्री यादवायै नमः
४६९ श्री पूर्णिमायै नमः
४७० श्री अमायै नमः
४७१ श्री त्रि-खण्डायै नमः
४७२ श्री त्रि-मुण्डायै नमः
४७३ श्री मान्यायै नमः
४७४ श्री भूत-मात्रे नमः
४७५ श्री भवेश्वर्यै नमः
४७६ श्री भोगदायै नमः
४७७ श्री स्वर्गदायै नमः
४७८ श्री मोक्षायै नमः
४७९ श्री सुभगायै नमः
४८० श्री यज्ञ-रूपिण्यै नमः
४८१ श्री अन्नदायै नमः
४८२ श्री सर्व-सम्पत्त्यैः नमः
४८३ श्री सङ्कटायै नमः
४८४ श्री सम्पदायै नमः
४८५ श्री स्मृत्यै नमः
४८६ श्री वैदूर्य-मुकुटायै नमः
४८७ श्री मेधायै नमः
४८८ श्री सर्व-विद्येश्वरेश्वर्यै नमः
४८९ श्री ब्रह्मानन्दायै नमः
४९० श्री ब्रह्म-दात्र्यै नमः
४९१ श्री मृडान्यै नमः
४९२ श्री कैटभेश्वर्यै नमः
४९३ श्री अरुन्धत्यै नमः
४९४ श्री अक्ष-मालायै नमः
४९५ श्री अस्थिरायै नमः
४९६ श्री ग्राम्य-देवतायै नमः
४९७ श्री वर्णेश्वर्यै नमः

४९८ श्री वर्ण-मात्रे नमः
४९९ श्री चिन्ता-पूर्ण्यै नमः
५०० श्री विलक्षणायै नमः
५०१ श्री त्रीक्षणायै नमः
५०२ श्री मङ्गलायै नमः
५०३ श्री काल्यै नमः
५०४ श्री वैराट्यै नमः
५०५ श्री पद्म-मालिन्यै नमः
५०६ श्री अमलायै नमः
५०७ श्री विकटायै नमः
५०८ श्री मुख्यायै नमः
५०९ श्री अविज्ञेयायै नमः
५१० श्री स्वयम्भुवायै नमः
५११ श्री ऊर्ज्जायै नमः
५१२ श्री तारावत्यै नमः
५१३ श्री वेलायै नमः
५१४ श्री मानव्यै नमः
५१५ श्री चतुः-स्तन्यै नमः
५१६ श्री चतुर्नेत्रायै नमः
५१७ श्री चतुर्हस्तायै नमः
५१८ श्री चतुर्दन्तायै नमः
५१९ श्री चतुर्मुख्यै नमः
५२० श्री शत-रूपायै नमः
५२१ श्री बहु-रूपायै नमः
५२२ श्री अरूपायै नमः
५२३ श्री विश्वतोमुख्यै नमः
५२४ श्री गरिष्ठायै नमः
५२५ श्री गुर्विण्यै नमः
५२६ श्री गुर्व्यै नमः
५२७ श्री व्याप्यायै नमः
५२८ श्री भौम्यै नमः
५२९ श्री भाविन्यै नमः
५३० श्री अजातायै नमः
५३१ श्री सुजातायै नमः
५३२ श्री व्यक्तायै नमः
५३३ श्री अचलायै नमः
५३४ श्री अक्षयायै नमः
५३५ श्री क्षमायै नमः
५३६ श्री मारिषायै नमः
५३७ श्री धर्मिण्यै नमः
५३८ श्री हर्षायै नमः
५३९ श्री भूत-धात्र्यै नमः
५४० श्री धेनुकायै नमः
५४१ श्री अयोनिजायै नमः
५४२ श्री अजायै नमः
५४३ श्री साध्व्यै नमः
५४४ श्री शच्यै नमः
५४५ श्री क्षेमायै नमः
५४६ श्री क्षयङ्कर्यै नमः
५४७ श्री बुद्ध्यै नमः
५४८ श्री लज्जायै नमः
५४९ श्री मह्यै नमः
५५० श्री सिद्ध्यै नमः
५५१ श्री शाक्र्यै नमः
५५२ श्री शान्त्यै नमः
५५३ श्री क्रियावत्यै नमः
५५४ श्री प्रज्ञायै नमः
५५५ श्री प्रीत्यै नमः

५५६ श्री श्रुत्यै नमः
५५७ श्री श्रद्धायै नमः
५५८ श्री स्वाहायै नमः
५५९ श्री कान्त्यै नमः
५६० श्री वपवे नमः
५६१ श्री स्वधायै नमः
५६२ श्री उन्नत्यै नमः
५६३ श्री सन्नत्यै नमः
५६४ श्री ख्यात्यै नमः
५६५ श्री शुद्ध्यै नमः
५६६ श्री स्थित्यै नमः
५६७ श्री मनस्विन्यै नमः
५६८ श्री उद्यमायै नमः
५६९ श्री वीरिण्यै नमः
५७० श्री क्षान्त्यै नमः
५७१ श्री मार्कण्डेय्यै नमः
५७२ श्री त्रयोदश्यै नमः
५७३ श्री प्रसिद्धायै नमः
५७४ श्री प्रतिष्ठायै नमः
५७५ श्री व्याप्तायै नमः
५७६ श्री अनुसूयाकृत्यै नमः
५७७ श्री यमायै नमः
५७८ श्री महा-धीरायै नमः
५७९ श्री महा-वीरायै नमः
५८० श्री भुजङ्ग्यै नमः
५८१ श्री वलयाकृत्यै नमः
५८२ श्री हर-सिद्धायै नमः
५८३ श्री सिद्ध-काल्यै नमः
५८४ श्री सिद्धाम्बायै नमः
५८५ श्री सिद्ध-पूजितायै नमः
५८६ श्री परानन्दायै नमः
५८७ श्री परा-प्रीत्यै नमः
५८८ श्री परा-तुष्टि्यै नमः
५८९ श्री परेश्वर्यै नमः
५९० श्री वक्रेश्वर्यै नमः
५९१ श्री चतुर्वक्त्रायै नमः
५९२ श्री अनाथायै नमः
५९३ श्री शिव-साधिकायै नमः
५९४ श्री नारायण्यै नमः
५९५ श्री नाद-रूपायै नमः
५९६ श्री नादिन्यै नमः
५९७ श्री नर्त्तक्यै नमः
५९८ श्री नट्यै नमः
५९९ श्री सर्व-प्रदायै नमः
६०० श्री पञ्च-वक्त्रायै नमः
६०१ श्री कामिलायै नमः
६०२ श्री कामिकायै नमः
६०३ श्री शिवायै नमः
६०४ श्री दुर्गमायै नमः
६०५ श्री दुरतिक्रान्तायै नमः
६०६ श्री दुर्ध्येयायै नमः
६०७ श्री दुष्परिग्रहायै नमः
६०८ श्री दुर्जयायै नमः
६०९ श्री दानव्यै नमः
६१० श्री देव्यै नमः
६११ श्री दैत्यघ्न्यै नमः
६१२ श्री दैत्य-तापिन्यै नमः
६१३ श्री ऊर्जस्वत्यै नमः

६१४ श्री महा-बुद्ध्यै नमः
६१५ श्री रटन्त्यै नमः
६१६ श्री सिद्ध-देवतायै नमः
६१७ श्री कीर्तिदायै नमः
६१८ श्री प्रवरायै नमः
६१९ श्री लभ्यायै नमः
६२० श्री शरण्यायै नमः
६२१ श्री शिव-शोभनायै नमः
६२२ श्री सन्मार्ग-दायिन्यै नमः
६२३ श्री शुद्धायै नमः
६२४ श्री सुरसायै नमः
६२५ श्री रक्त-चण्डिकायै नमः
६२६ श्री सुरूपायै नमः
६२७ श्री द्रविणायै नमः
६२८ श्री रक्तायै नमः
६२९ श्री विरक्तायै नमः
६३० श्री ब्रह्म-वादिन्यै नमः
६३१ श्री अगुणायै नमः
६३२ श्री निर्गुणायै नमः
६३३ श्री गुण्यायै नमः
६३४ श्री त्रिगुणायै नमः
६३५ श्री त्रिगुणात्मिकायै नमः
६३६ श्री उड्डीयानायै नमः
६३७ श्री पूर्ण-शैलायै नमः
६३८ श्री कामस्थायै नमः
६३९ श्री जलन्धर्यै नमः
६४० श्री श्मशान-भैरव्यै नमः
६४१ श्री काल-भैरव्यै नमः
६४२ श्री कुल-भैरव्यै नमः
६४३ श्री त्रिपुरा-भैरवी-देव्यै नमः
६४४ श्री भैरव्यै नमः
६४५ श्री वीर-भैरव्यै नमः
६४६ श्री श्रीमहा - भैरवी - देव्यै नमः
६४७ श्री सुखदानन्द-भैरव्यै नमः
६४८ श्री मुक्तिदा - भैरवी - देव्यै नमः
६४९ श्री ज्ञानदानन्द-भैरव्यै नमः
६५० श्री दाक्षायण्यै नमः
६५१ श्री दक्ष-यज्ञ-नाशिन्यै नमः
६५२ श्री नग-नन्दिन्यै नमः
६५३ श्री राज-पुत्र्यै नमः
६५४ श्री राज-पूज्यायै नमः
६५५ श्री भक्ति-वश्यायै नमः
६५६ श्री सनातन्यै नमः
६५७ श्री अच्युतायै नमः
६५८ श्री चर्चिकायै नमः
६५९ श्री मायायै नमः
६६० श्री षोडश्यै नमः
६६१ श्री सुर-सुन्दर्यै नमः
६६२ श्री चक्रेश्यै नमः
६६३ श्री चक्रिण्यै नमः
६६४ श्री चक्रायै नमः
६६५ श्री चक्र-राज-निवासिन्यै नमः
६६६ श्री नायिकायै नमः
६६७ श्री यक्षिण्यै नमः
६६८ श्री बोधायै नमः
६६९ श्री बोधिन्यै नमः
६७० श्री मुण्डकेश्वर्यै नमः
६७१ श्री बीज-रूपायै नमः

६७२ श्री चन्द्र-भागायै नमः
६७३ श्री कुमार्यै नमः
६७४ श्री कपिलेश्वर्यै नमः
६७५ श्री वृद्धायै नमः
६७६ श्री अति-वृद्धायै नमः
६७७ श्री रसिकायै नमः
६७८ श्री रसनायै नमः
६७९ श्री पाटलेश्वर्यै नमः
६८० श्री माहेश्वर्यै नमः
६८१ श्री महाऽऽनन्दायै नमः
६८२ श्री प्रबलायै नमः
६८३ श्री अबलायै नमः
६८४ श्री बलायै नमः
६८५ श्री व्याघ्राम्बर्यै नमः
६८६ श्री महेशान्यै नमः
६८७ श्री शर्वाण्यै नमः
६८८ श्री तामस्यै नमः
६८९ श्री दयायै नमः
६९० श्री धरण्यै नमः
६९१ श्री धारिण्यै नमः
६९२ श्री तृष्णायै नमः
६९३ श्री महा-मार्यै नमः
६९४ श्री दुरत्ययायै नमः
६९५ श्री रङ्गिन्यै नमः
६९६ श्री टङ्किन्यै नमः
६९७ श्री लीलायै नमः
६९८ श्री महा-वेगायै नमः
६९९ श्री मखेश्वर्यै नमः
७०० श्री जयदायै नमः
७०१ श्री जित्वरायै नमः
७०२ श्री जेत्र्यै नमः
७०३ श्री जय-श्रियै नमः
७०४ श्री जय-शालिन्यै नमः
७०५ श्री नर्मदायै नमः
७०६ श्री यमुनायै नमः
७०७ श्री गङ्गायै नमः
७०८ श्री वेन्वायै नमः
७०९ श्री वेण्यै नमः
७१० श्री दृषद्वत्यै नमः
७११ श्री दशार्णायै नमः
७१२ श्री अलकायै नमः
७१३ श्री सीतायै नमः
७१४ श्री तुङ्ग-भद्रायै नमः
७१५ श्री तरङ्गिण्यै नमः
७१६ श्री मदोत्कटायै नमः
७१७ श्री मयूराक्ष्यै नमः
७१८ श्री मीनाक्ष्यै नमः
७१९ श्री मणि-कुण्डलायै नमः
७२० श्री सु-महायै नमः
७२१ श्री महतां सेव्यायै नमः
७२२ श्री मायूर्यै नमः
७२३ श्री नारसिंहिकायै नमः
७२४ श्री वगलायै नमः
७२५ श्री स्तम्भिन्यै नमः
७२६ श्री पीतायै नमः
७२७ श्री पूजितायै नमः
७२८ श्री शिव-नायिकायै नमः
७२९ श्री वेद-वेद्यायै नमः

७३० श्री महा-रौद्रयै नमः
७३१ श्री वेद-बाह्यायै नमः
७३२ श्री गति-प्रदायै नमः
७३३ श्री सर्व-शास्त्र-मय्यै नमः
७३४ श्री आर्यायै नमः
७३५ श्री अवाङ्-मनस-गोचरायै नमः
७३६ श्री अग्नि-ज्वालायै नमः
७३७ श्री महा-ज्वालायै नमः
७३८ श्री प्रज्वालायै नमः
७३९ श्री दीप्त-जिह्विकायै नमः
७४० श्री रञ्जन्यै नमः
७४१ श्री रमण्यै नमः
७४२ श्री रुद्रायै नमः
७४३ श्री रमणीयायै नमः
७४४ श्री प्रभञ्जन्यै नमः
७४५ श्री वरिष्ठायै नमः
७४६ श्री विशिष्टायै नमः
७४७ श्री शिष्टायै नमः
७४८ श्री श्रेष्ठायै नमः
७४९ श्री निष्ठायै नमः
७५० श्री कृपा-वत्यै नमः
७५१ श्री ऊर्ध्व-मुख्यै नमः
७५२ श्री विशालास्यायै नमः
७५३ श्री रुद्र-भार्यायै नमः
७५४ श्री भयङ्कर्यै नमः
७५५ श्री सिंह-पृष्ठ-समासीनायै नमः
७५६ श्री शिव-ताण्डव-दर्शिन्यै नमः
७५७ श्री हैम-वत्यै नमः
७५८ श्री पद्म-गन्धायै नमः
७५९ श्री गन्धेश्वर्यै नमः
७६० श्री भव-प्रियायै नमः
७६१ श्री अणु-रूपायै नमः
७६२ श्री महा-सूक्ष्मायै नमः
७६३ श्री प्रत्यक्षायै नमः
७६४ श्री मखान्तकायै नमः
७६५ श्री सर्व-विद्यायै नमः
७६६ श्री रक्त-नेत्रायै नमः
७६७ श्री बहु-नेत्रायै नमः
७६८ श्री अनेत्रकायै नमः
७६९ श्री विश्वम्भरायै नमः
७७० श्री विश्व-योन्यै नमः
७७१ श्री सर्वाकारायै नमः
७७२ श्री सुदर्शनायै नमः
७७३ श्री कृष्णाजिन-धरा-देव्यै नमः
७७४ श्री उत्तरायै नमः
७७५ श्री कन्द-वासिन्यै नमः
७७६ श्री प्रकृष्टायै नमः
७७७ श्री प्रहृष्टायै नमः
७७८ श्री हृष्टायै नमः
७७९ श्री चन्द्र-सूर्याग्नि-भक्षिण्यै नमः
७८० श्री विश्वे-देव्यै नमः
७८१ श्री महा-मुण्डायै नमः
७८२ श्री पञ्च-मुण्डाधि-वासिन्यै नमः
७८३ श्री प्रसाद-सुमुख्यै नमः
७८४ श्री गूढायै नमः
७८५ श्री सु-मुखायै नमः
७८६ श्री सु-मुखेश्वर्यै नमः
७८७ श्री तत्-पदायै नमः

७८८ श्री सत्-पदायै नमः
७८९ श्री अत्यर्थायै नमः
७९० श्री प्रभावत्यै नमः
७९१ श्री दयावत्यै नमः
७९२ श्री चण्ड-दुर्गायै नमः
७९३ श्री चण्डी-देव्यै नमः
७९४ श्री वन-दुर्गायै नमः
७९५ श्री वनेश्वर्यै नमः
७९६ श्री ध्रुवेश्वर्यै नमः
७९७ श्री ध्रुवायै नमः
७९८ श्री ध्रौव्यायै नमः
७९९ श्री ध्रुवाराध्यायै नमः
८०० श्री ध्रुवा-गत्यै नमः
८०१ श्री सच्चिदायै नमः
८०२ श्री सच्चिदानन्दायै नमः
८०३ श्री आपो-मय्यै नमः
८०४ श्री महा-सुखायै नमः
८०५ श्री वागीश्यै नमः
८०६ श्री वाग्-भवायै नमः
८०७ श्री आकण्ठ-वासिन्यै नमः
८०८ श्री वह्नि-सुन्दर्यै नमः
८०९ श्री गण-नाथ-प्रियायै नमः
८१० श्री ज्ञान-गम्यायै नमः
८११ श्री सर्व-लोकगायै नमः
८१२ श्री प्रीतिदायै नमः
८१३ श्री गतिदायै नमः
८१४ श्री प्रेयायै नमः
८१५ श्री ध्येयायै नमः
८१६ श्री ज्ञेयायै नमः
८१७ श्री भयापहायै नमः
८१८ श्री श्रीकर्यै नमः
८१९ श्री श्रीधर्यै नमः
८२० श्री सुश्रियै नमः
८२१ श्री श्रीविद्यायै नमः
८२२ श्री श्रीविभावन्यै नमः
८२३ श्री श्रीयुतायै नमः
८२४ श्री श्रीमतां सेव्यायै नमः
८२५ श्री श्रीमूर्त्यै नमः
८२६ श्री स्त्री-स्वरूपिण्यै नमः
८२७ श्री अनृतायै नमः
८२८ श्री सुनृतायै नमः
८२९ श्री सेव्यायै नमः
८३० श्री सर्व-लोकोत्तमोत्तमायै नमः
८३१ श्री जयन्त्यै नमः
८३२ श्री चन्दनायै नमः
८३३ श्री गौर्यै नमः
८३४ श्री गर्जिन्यै नमः
८३५ श्री गगनोपमायै नमः
८३६ श्री छिन्न-मस्तायै नमः
८३७ श्री महा-मत्तायै नमः
८३८ श्री रेणुकायै नमः
८३९ श्री वन-शङ्कर्यै नमः
८४० श्री ग्राहिकायै नमः
८४१ श्री ग्रासिन्यै नमः
८४२ श्री देव-भूषणायै नमः
८४३ श्री कपर्दिन्यै नमः
८४४ श्री सुमत्यै नमः
८४५ श्री तपत्यै नमः

८४६ श्री स्वस्थायै नमः
८४७ श्री हृदिस्थायै नमः
८४८ श्री मृग-लोचनायै नमः
८४९ श्री मनोहरायै नमः
८५० श्री वज्र-देहायै नमः
८५१ श्री कुलेश्यै नमः
८५२ काम-चारिण्यै नमः
८५३ श्री रक्ताभायै नमः
८५४ श्री निद्रितायै नमः
८५५ श्री निद्रायै नमः
८५६ श्री रक्ताङ्ग्यै नमः
८५७ श्री रक्त-लोचनायै नमः
८५८ श्री कुल-चण्डायै नमः
८५९ श्री चण्ड-वक्त्रायै नमः
८६० श्री चण्डोग्रायै नमः
८६१ श्री चण्ड-मालिन्यै नमः
८६२ श्री रक्त-चण्ड्यै नमः
८६३ श्री रुद्र-चण्ड्यै नमः
८६४ श्री चण्डाक्ष्यै नमः
८६५ श्री चण्ड-नायिकायै नमः
८६६ श्री व्याघ्रास्यायै नमः
८६७ श्री शैलजायै नमः
८६८ श्री भाषायै नमः
८६९ श्री वेदार्थायै नमः
८७० श्री रण-रङ्गिण्यै नमः
८७१ श्री विल्व-पत्र-कृतावासायै नमः
८७२ श्री तरुण्यै नमः
८७३ श्री शिव-मोहिन्यै नमः
८७४ श्री स्थाणु-प्रियायै नमः
८७५ श्री करालास्यायै नमः
८७६ श्री गुणदायै नमः
८७७ श्री लिङ्ग-वासिन्यै नमः
८७८ श्री अविद्यायै नमः
८७९ श्री ममतायै नमः
८८० श्री अज्ञायै नमः
८८१ श्री अहन्तायै नमः
८८२ श्री अशुभायै नमः
८८३ श्री कृशायै नमः
८८४ श्री महिषघ्न्यै नमः
८८५ श्री सु-दुष्प्रेक्ष्यायै नमः
८८६ श्री तमसायै नमः
८८७ श्री भव-मोचन्यै नमः
८८८ श्री पुर-हुतायै नमः
८८९ श्री सु-प्रतिष्ठायै नमः
८९० श्री रजन्यै नमः
८९१ श्री इष्ट-देवतायै नमः
८९२ श्री दुःखिन्यै नमः
८९३ श्री कातरायै नमः
८९४ श्री क्षीणायै नमः
८९५ श्री गोमत्यै नमः
८९६ श्री त्र्यम्बकेश्वरायै नमः
८९७ श्री द्वारावत्यै नमः
८९८ श्री अप्रमेयायै नमः
८९९ श्री अव्ययायै नमः
९०० श्री अमित-विक्रमायै नमः
९०१ श्री मायावत्यै नमः
९०२ श्री कृपा-मूर्त्यै नमः
९०३ श्री द्वारेश्यै नमः

९०४ श्री द्वार-वासिन्यै नमः
९०५ श्री तेजो-मय्यै नमः
९०६ श्री विश्व-कामायै नमः
९०७ श्री मन्मथायै नमः
९०८ श्री पुष्करावत्यै नमः
९०९ श्री चित्रा-देव्यै नमः
९१० श्री महा-काल्यै नमः
९११ श्री काल-हन्त्र्यै नमः
९१२ श्री क्रिया-मय्यै नमः
९१३ श्री कृपा-मय्यै नमः
९१४ श्री कृपा-श्रेष्ठायै नमः
९१५ श्री करुणायै नमः
९१६ श्री करुणा-मय्यै नमः
९१७ श्री सुप्रभायै नमः
९१८ श्री सुव्रतायै नमः
९१९ श्री माध्व्यै नमः
९२० श्री मधुघ्न्यै नमः
९२१ श्री मुण्ड-मर्दिन्यै नमः
९२२ श्री उल्लासिन्यै नमः
९२३ श्री महोल्लासायै नमः
९२४ श्री स्वामिन्यै नमः
९२५ श्री शर्म-दायिन्यै नमः
९२६ श्री श्रीमात्रे नमः
९२७ श्री श्रीमहा-राज्यै नमः
९२८ श्री प्रसन्नायै नमः
९२९ श्री प्रसन्नाननायै नमः
९३० श्री स्व-प्रकाशायै नमः
९३१ श्री महा-भूमायै नमः
९३२ श्री ब्रह्म-रूपायै नमः
९३३ श्री शिवङ्कर्यै नमः
९३४ श्री शक्तिदायै नमः
९३५ श्री शान्तिदायै नमः
९३६ श्री कर्म-फलदायै नमः
९३७ श्री श्री-प्रदायिन्यै नमः
९३८ श्री प्रियदायै नमः
९३९ श्री धनदायै नमः
९४० श्री श्री-दायै नमः
९४१ श्री मोक्षदायै नमः
९४२ श्री ज्ञानदायै नमः
९४३ श्री भवायै नमः
९४४ श्री भूमानन्द-कर्यै नमः
९४५ श्री भूमायै नमः
९४६ श्री प्रसीद-श्रुति-गोचरायै नमः
९४७ श्री रक्त-चन्दन-सिक्ताङ्ग्यै नमः
९४८ श्री सिन्दूराङ्कित-भालिन्यै नमः
९४९ श्री स्वच्छन्द-शक्त्यै नमः
९५० श्री गहनायै नमः
९५१ श्री प्रजावत्यै नमः
९५२ श्री सुखावहायै नमः
९५३ श्री योगेश्वर्यै नमः
९५४ श्री योगराध्यायै नमः
९५५ श्री महा-त्रिशूल-धारिण्यै नमः
९५६ श्री राज्येश्यै नमः
९५७ श्री त्रिपुरायै नमः
९५८ श्री सिद्धायै नमः
९५९ श्री महा-विभव-शालिन्यै नमः
९६० श्री ह्रीङ्कार्यै नमः
९६१ श्री शङ्कर्यै नमः

९६२ श्री सर्व-पङ्कजस्थायै नमः
९६३ श्री शत-श्रुत्यै नमः
९६४ श्री निस्तारिण्यै नमः
९६५ श्री जगन्मात्रे नमः
९६६ श्री जगदम्बायै नमः
९६७ श्री जगद्धितायै नमः
९६८ श्री साष्टाङ्ग-प्रणति-प्रीतायै नमः
९६९ श्री भक्तानुग्रह-कारिण्यै नमः
९७० श्री शरणागता-दीनार्त-
परित्राण-परायणायै नमः
९७१ श्री निराश्रयाश्रयायै नमः
९७२ श्री दीन-तारिण्यै नमः
९७३ श्री भक्त-वत्सलायै नमः
९७४ श्री दीनाम्बायै नमः
९७५ श्री दीन-शरणायै नमः
९७६ श्री भक्तानाम-भयङ्कर्यै नमः
९७७ श्री कृताञ्जलि-नमस्कारायै नमः
९७८ श्री स्वयम्भु - कुसुमार्चितायै नमः
९७९ श्री कौल-तर्पण-सम्प्रीतायै नमः
९८० श्री स्वयम्भात्यै नमः
९८१ श्री विभातिन्यै नमः
९८२ श्री शत-शीर्षायै नमः
९८३ श्री अनन्त-शीर्षायै नमः
९८४ श्री श्रीकण्ठार्ध-शरीरिण्यै नमः
०९८५ श्री जय-ध्वनि-प्रियायै नमः
०९८६ श्री कुल-भास्कर्यै नमः
०९८७ श्री कुल-साधिकायै नमः
०९८८ श्री अभय-वरद-हस्तायै नमः
०९८९ श्री सर्वानन्दायै नमः
०९९० श्री संविदायै नमः
०९९१ श्री महीयस्यै नमः
०९९२ श्री महा-मूर्त्यै नमः
०९९३ श्री सती-राज्ञ्यै नमः
०९९४ श्री भयार्त्तिहायै नमः
०९९५ श्री ब्रह्म-मय्यै नमः
०९९६ श्री विश्व-पीठायै नमः
०९९७ श्री प्रज्ञानायै नमः
०९९८ श्री महिमा-मय्यै नमः
०९९९ श्री सिंहारूढायै नमः
१००० श्री वृषारूढायै नमः
१००१ श्री अश्वारूढायै नमः
१००२ श्री अधीश्वर्यै नमः
१००३ श्री वराभय-करायै नमः
१००४ श्री सर्व-वरेण्यायै नमः
१००५ श्री विश्व-विक्रमायै नमः
१००६ श्री विश्वाश्रयायै नमः
१००७ श्री महा-भूत्यै नमः
१००८ श्री श्री-प्रज्ञादि-समन्वितायै नमः

***

श्रीदुर्गा-स्तोत्र-राजम्

पूर्व-पीठिका

।।श्रीभैरव उवाच।।

अधुना देवि! वक्ष्यामि, दुर्गा-स्तोत्रं मनोहरम्।
मूल-मन्त्र-मयं दिव्यं, सर्व-सारस्वत-प्रदम्।।१।।

श्रीभैरव ने कहा–हे देवि! अब **मनोहर दुर्गा-स्तोत्र** को कहूँगा, जो **मूल-मन्त्र से युक्त है, दिव्य है और सभी ज्ञानों का देनेवाला** है।।१

दुर्गार्ति-शमनं पुण्यं, साधकानां जय-प्रदम्।
दुर्गाया अङ्ग-भूतं तु, स्तोत्र-राजं परात् परम्।।२।।

कठिन व्याकुलता को शान्त करनेवाला, **पवित्र**, साधकों को विजय दिलानेवाला और **भगवती दुर्गा का अङ्ग-स्वरूप** यह स्तोत्र-राज श्रेष्ठ से भी श्रेष्ठ है।।२

श्रीदुर्गा-स्तोत्र-राजस्य, ऋषिर्देवो महेश्वरः।
छन्दोऽनुष्टुप् देवता च, श्रीदुर्गाऽष्टाक्षरा शिवे !।।३।।

हे शिवे! 'श्रीदुर्गा-स्तोत्र-राज' के ऋषि भगवान् महेश्वर, छन्द अनुष्टुप् और **देवता अष्टाक्षरा श्री दुर्गा** हैं।।३

* **'अष्टाक्षरा'**–श्रीदुर्गा का आठ अक्षरोंवाला मन्त्र : **'ॐ ह्रीं दुं दुर्गायै नमः।'**

दुं वीजं च परा शक्तिः, नमः कीलकमीश्वरि!।
धर्मार्थ-काम-मोक्षार्थे, दुर्गा-स्तोत्र-पाठे विनियोगः।।४।।

हे ईश्वरि! श्रीदुर्गा-स्तोत्र के पाठ में वीज **'दुं'**, शक्ति परा **(ह्रीं)**, कीलक **'नमः'** और विनियोग **'धर्मार्थ-काम-मोक्ष के लिए'** है।।४

विनियोग : ॐ अस्य श्रीदुर्गा-स्तोत्र-राजस्य श्री भगवान् महेश्वर ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। श्रीदुर्गा देवता। दुं वीजं। ह्रीं शक्तिः। नमः कीलकं। धर्मार्थ-काम-मोक्षार्थे पाठे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास : श्री भगवान् महेश्वर-ऋषये नमः शिरसि। अनुष्टुप्-छन्दसे नमः मुखे। श्रीदुर्गा-देवतायै नमः हृदि। दुं वीजाय नमः गुह्ये। ह्रीं शक्तये नमः नाभौ। नमः कीलकाय नमः पादयोः। धर्मार्थ-काम-मोक्षार्थे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे।

ध्यान– दूर्वा-निभां त्रि-नयनां, विलसत् किरीटाम्,
शङ्खाब्ज-खड्ग-शर-खेटक-शूल-चापान्।
सन्तर्जनीं च दधतीं, महिषासनस्थाम्,
दुर्गां नवार-कुल-पीठ-गतां भजेऽहम्।।५।।

मैं दूब के समान **श्याम-वर्णा, तीन नेत्रवाली, मुकुट से सुशोभिता, शङ्ख-कमल-खड्ग-वाण-खेटक-शूल-धनुष** और **तर्जनी** धारण किए हुई, **महिषासन** पर विराजमाना, नवार-कुल-पीठ पर स्थिता **दुर्गा** का भजन करता हूँ।

।।मूल-पाठ।।

तारं हारं मन्त्र-माला-सु-वीजम्, ध्यायेदन्तर्यो बलं बाल-कान्तः।
तस्यं स्मारं स्मारमंघ्रि-द्वयींद्राग्, रम्भाऽऽयाति स्वर्गता काम-वश्या।।१।।

जो **प्रणव (ॐ)** एवं सुन्दर वीजों से युक्त **मन्त्र-माला** का अपने हृदय में ध्यान करता है, उसके चरण-युगलों का स्मरण कर **रम्भा** भी तुरन्त वशीभूत होकर स्वर्ग से आती है।।१

मायां जपेद् यस्तव मन्त्र - मध्ये, दुर्गे! सदा दुर्गति - खेद - खिन्नः।
भवेत् स भूमौ नृप-मौलि-माला, माणिक्य-निर्घृष्ट-पदारविन्दः।।२।।

हे दुर्गे! दुर्दशा के दुःख से दुःखी जो मनुष्य तुम्हारे मन्त्र के बीच में **'माया' (ह्रीं)** का जप करता है, वह पृथ्वी पर इतना प्रतापी होता है कि उसके चरण-कमलों पर श्रेष्ठ राजा-गण अपने मणि-मुक्ता से शोभायमान मस्तकों को रखकर उसे प्रणाम करते हैं।।२

चाक्रिकं यदि जपेत् तवाम्बिके, चक्र - मध्य - गत ईश्वरेश्वरि!।
साधको भवति चक्र - वर्तिनाम्, नायको नय - विलास - कोविदः।।३।।

हे ईश्वर की स्वामिनी अम्बिके! चक्रार्चन के बीच यदि कोई साधक तुम्हारे **चाक्रिक (चक्री-क्लीं)** का जप करे, तो वह न्याय-शास्त्र में प्रवीण होकर चक्र-वर्ती राजाओं का नेता होता है।।३

चक्रि - वीजमपरं स्मरेच्छिवे, योऽरि - वर्ग - विहिताहित - व्यथः।
आजि - मण्डल - गतो जपेद् रिपून्, वाजि - वारण - रथाश्रितो नरः।।४।।

हे शिवे! शत्रु-वर्ग से पीड़ित जो व्यक्ति तुम्हारे दूसरे **चक्रि-वीज (दु)** का **स्मरण** करता है, वह रण-क्षेत्र में जाकर घोड़े, हाथी और रथ पर सवार होकर **शत्रुओं** पर विजय प्राप्त करता है।।४

दूर्वा-वीजं यो जपेत् प्रेत-भूमौ, सायं माया-भस्मना लिप्त-कायः।
गीर्वाणानां नायको देव-मन्त्री, भुक्त्वा राज्यं प्राज्य-प्राज्यं करोति।।५।।

जो सायं-काल **माया-भस्म** (माया-वीज **(ह्रीं)** से अभिमन्त्रित भस्म) को अपने शरीर में लेपकर श्मशान-भूमि में **दूर्वा-वीज (दु)** का जप करता है, वह देवताओं का नेता होकर राज्य-भोग कर अत्यधिक यज्ञ करता है।।५

वायव्य-वीजं यदि साधको जपेत्, प्रिया-कुच-द्वन्द्व-विमर्दन-क्षमः।
समस्त-कान्ता-जन-नेत्र-वागुरैः, विलास-हंसो भविता स पार्वति!।।६।।

यदि साधक '**वायव्य-वीज**' (ह्रीं) का जप करता है, तो उसमें असीम पुरुषत्व आता है और **हे पार्वति!** वह समस्त रमणियों के कटाक्ष का पात्र बनता है।।६

विश्व विश्वेश्वरि! यदि जपेत् काम-वेला-कलार्तो,
रात्रौ मात्राक्षर-विलसित-न्यास ईशानि मातः!।
तस्य स्मेरानन-सरसिज-भ्राजमानाङ्ग-लक्ष्मीः,
वश्याऽवश्यं सुर-पुर-वधू-मौलि-मालोर्वशी सा।।७।।

हे विश्वेश्वरि! हे ईशानि मातः! यदि काम-वेला की कला से व्याकुल व्यक्ति रात्रि में मात्राक्षर-न्यास से सुशोभित होकर '**विश्व-वीज**' (ॐ) का जप करे, तो उसका प्रसन्न-मुख कमल के समान शोभायमान होता है और देव-लोक की स्त्रियों में श्रेष्ठ उर्वशी अवश्य ही उसके शरीर की शोभा के वशीभूत होती है।।७

भू-गेहाञ्चित-सत्-त्रिवृत्त-विलसन्नागार-वृत्ताञ्चित–
व्यग्रारोल्लसिताग्नि-कोण-विलसच्छ्रीविन्दु-पीठ-स्थिताम्।
ध्यायेच्चेतसि शर्व-पत्नि! भवतीं माध्वी-रसाघूर्णिताम्,
यो मन्त्री स भविष्यति स्मर-समः स्त्रीणां धरण्यां दिवि।।८।।

भू-पुर से सुशोभित, त्रि-वृत्तों से सज्जित, **आगार-वृत्त** से शोभित, व्यग्रार से उल्लसित, **अग्नि-कोण** में शोभायमान **श्री विन्दु-पीठ** में विराजमान, माध्वीक रस से मत्त तुम्हारे स्वरूप को **हे शिव-पत्नि!** जो मान्त्रिक अपने मन में ध्यान करता है, वह पृथ्वी तथा स्वर्ग-लोक में स्त्रियों के बीच **काम-देव** के समान शोभित होता है।।८

।।फल-श्रुति।।

दुर्गा-स्तवं मनु-मयं मनु-राज-मौलिर्माणिक्यमुत्तम-शिवाङ्ग-रहस्य-भूतम्।
प्रातः पठेद् यदि जपावसरेऽर्चनायाम्, भूमौ भवेत् स नृपतिर्दिवि देव-नाथः॥१॥

उक्त '**दुर्गा-स्तव**' मन्त्र-मय और मन्त्र-राजों में श्रेष्ठ है। **भगवती शिवा** के रहस्य-पूर्ण अङ्ग के समान उत्तम है। यदि **प्रातः-काल पूजन** में जप के अवसर पर इसका पाठ करे, तो वह पृथ्वी पर राजा और स्वर्ग में इन्द्र होता है।।१

इति स्तोत्रं महा-पुण्यं, पञ्चाङ्गैक-शिरो-मणिम्।
यः पठेदर्ध-रात्रे तु, तस्य वश्यं जगत्-त्रयम्।।२।।

यह **स्तोत्र** अत्यन्त पुण्य-दायक और पञ्चाङ्ग में श्रेष्ठ है। जो इसे **अर्ध-रात्रि** में पढ़ता है, उसके वश में तीनों लोक होते हैं।।२

***

श्रीदुर्गा षोडश-नाम-स्तोत्रम्

षोडश नामों का वर्णन

।।श्री नारद उवाच।।

सर्वाख्यानं श्रुतं ब्रह्मन्!, अतीव-परमाद्भुतम्।
अधुना श्रोतुमिच्छामि, दुर्गोपाख्यानमुत्तमम् ।।१।।

श्रीनारद ने कहा–हे ब्रह्मन्!, अत्यन्त ही विलक्षण सारे कथानक को मैंने सुना। अब मैं दुर्गा का उपाख्यान सुनना चाहता हूँ।।१

दुर्गा नारायणीशाना, विष्णु-माया शिवा सती।
नित्या सत्या भगवती, शर्वाणी सर्व-मङ्गला।।२।।
अम्बिका वैष्णवी गौरी, पार्वती च सनातनी।
नामानि कौथुमोक्तानि, शुभानि शुभदानि च।।३।।

१ दुर्गा, २ नारायणी, ३ ईशाना, ४ विष्णु-माया, ५ शिवा, ६ सती, ७ नित्या, ८ सत्या, ९ भगवती, १० शर्वाणी, ११ सर्व-मङ्गला, १२ अम्बिका, १३ वैष्णवी, १४ गौरी, १५ पार्वती और १६ सनातनी–ये सोलह कल्याण-कारी पवित्र नाम कहे गए हैं।।२-३

अर्थं षोडश-नाम्नां च, सर्वेषामीप्सित-प्रदम्।
ब्रूहि वेद-विदां श्रेष्ठ!, वेदोक्तं सर्व-सम्मतम्।।४।।

सबकी मनो-कामनाओं की पूर्ति करनेवाले षोडश-नामों का अर्थ कहिए, जो हे श्रेष्ठ वेदज्ञ! वेद में सर्व-स्वीकृत रूप से कहा गया है।।४

केन वा पूजिता साऽऽदौ, द्वितीये केन वा पुरा?
तृतीये वा चतुर्थे वा, केन वा सर्व-पूजिता?।।५।।

प्राचीन-काल में पहली बार किसने उसकी पूजा की थी, फिर दूसरी बार, तीसरी और चौथी बार किसने उस सबसे पूजित भगवती का पूजन किया था?।।५

।।श्रीनारायण उवाच।।

अर्थं षोडश-नाम्नां च, विष्णुर्वेदे चकार सः।
पुनः पृच्छसि ज्ञात्वा च, कथयामि यथाऽऽगमम्।।६।।

श्रीनारायण ने कहा–सोलह नामों का अर्थ विष्णु ने वेद में किया है। फिर पूछते हो, तो आगम-रूप में जानकर कहता हूँ।।६

षोडश नामों का अर्थ

दुर्गे दैत्य-महा-विघ्ने, भव-वद्-दुर्ग-कर्मणि।
शोके दु:खे च नरके, यम-दण्डे च जन्मनि।।७।।
महा-भयेऽति-रोगे वै, चाशब्दो हन्तृ-वाचक:।
एतान् हन्त्येव या देवी, सा दुर्गा परि-कीर्तिता।।८।।

दुर्ग राक्षस, महान विघ्न, संसार जैसे कठिन कर्म, शोक, दु:ख, नरक, मृत्यु-दण्ड, महान् भय, असाध्य बीमारी और विनाश-सूचक अवैदिक कर्म-इनको जो देवी नष्ट करती है, वह '**दुर्गा**' के नाम से प्रसिद्ध है।।७-८

यशसा तेजसा रूपैर्नारायण-समा गुणै:।
शक्तिर्नारायणस्येयं, तेन नारायणी स्मृता।।९।।

यश, तेज, रूप और गुणों से नारायण के समान ही यह नारायण की शक्ति है। अत: इसे '**नारायणी**' कहा गया है।।९

ईशान: सर्व-सिद्धार्थश्चाशब्दो दातृ-वाचक:।
प्रिये दातरि चाशब्द:, शिवा तेन प्रकीर्तिता।।१०।।

'**ईशान**'—शब्द सभी अभीष्टों का वाचक है और '**आ**'—शब्द का प्रयोग देने के अर्थ में होता है। अत: प्रिय वस्तु को देनेवाली है, इससे **शिवा**—'**ईशाना**' कही गई हैं।।१०

सद्-बुद्ध्यधिष्ठातृ-देवी, विद्यमाना युगे युगे।
सृष्टा माया पुरा सृष्टा, विष्णुना परमात्मना।।११।।
मोहितं च यया विश्वं, विष्णु-माया च कीर्तिता।
शिवा कल्याण-रूपा च, शिवदा च शिव-प्रिया।।१२।।

सद्-बुद्धि की अधिष्ठात्री देवी प्रत्येक युग में रहती हैं। परमात्मा विष्णु ने माया से भी पहले उसकी सृष्टि की। विश्व को मोहित करने के कारण '**विष्णु-माया**' कही गईं। कल्याण-रूपिणी, कल्याण-दायिनी और शिव की प्रियतमा होने से वह '**शिवा**' हैं।।११-१२

प्रिये दातरि चाशब्द:, शिवा तेन प्रकीर्तिता।
पति-व्रता सुशीला या, सा सती परि-कीर्तिता।।१३।।

प्रिय वस्तु देनेवाली अर्थात् '**शिवा**' हैं। वह पति-व्रता और सुशीला होने से '**सती**'—नाम से प्रसिद्ध हैं।।१३

यथा नित्यो हि भगवान्, नित्या भगवती तथा।
स्व-मायया तिरोभूता, तत्रेशे प्राकृते लये।।१४।।

जैसे भगवान् नित्य हैं, वैसे ही भगवती '**नित्या**' हैं, जो अपनी माया से प्राकृत लय में छिपी रहती हैं।।१४

आब्रह्म-स्तम्ब-पर्यन्तं, सर्वं मिथ्यैव कृत्रिमम्।
दुर्गा सत्य-स्वरूपा सा, प्रकृतिर्भगवान् यथा।।१५।।

ब्रह्म से लेकर समस्त सृष्टि बनावटी और मिथ्या ही है, केवल दुर्गा सत्य-स्वरूपा प्रकृति है, जैसे कि स्वयं भगवान्। अत: वह 'सत्या' है।।१५

सिद्धैश्वर्यादिकं सर्वं, यस्यामस्ति युगे युगे।
सिद्धादिके भगो ज्ञेयस्तेन भगवती स्मृता।।१६।।

सिद्धि आदि सभी ऐश्वर्य जिसमें प्रत्येक युग में विद्यमान रहे हैं, वह–ऐश्वर्य का नाम 'भग' होने से–'भगवती' कही जाती हैं।।१६

सर्वान् मोक्षं प्रापयति, जन्म-मृत्यु-जरादिकम्।
चराचरांश्च स्व-स्थानं, शर्वाणी तेन कीर्तिता।।१७।।

चर-अचर सभी प्राणियों को वही जन्म-मृत्यु-जरा आदि और मोक्ष प्रदान करती हैं। इससे 'शर्वाणी'–नाम से प्रसिद्ध हैं।।१७

मङ्गलं मोक्ष-वचनं, चाशब्दो दातृ-वाचक:।
सर्वान् मोक्षाय ददति, सा एव सर्व-मङ्गला।।१८।।

'मङ्गल' का अर्थ है मोक्ष और 'आ'-कार देने के अर्थ में है। सबको मोक्ष देती हैं, इस प्रकार वह देवी 'सर्व-मङ्गला' हैं।।१८

हर्षे सम्पत्ति -कल्याणे, मङ्गलं परि- कीर्तितम्।
तान् ददाति च सा देवी, सा एव सर्व-मङ्गला।।१९।।

हर्ष, सम्पत्ति और कल्याण को 'मङ्गल' कहा गया है। उन सबको वह देवी प्रदान करती हैं। अत: वह 'सर्व-मङ्गला' हैं।।१९

अम्बेति मातृ - वचना, वन्दने पूजनेऽपि च।
पूजिता वन्दिता माता, जगतां तेन साऽम्बिका।।२०।।

'अम्बा!' इस माता-बोधक शब्द से उस जगन्माता की पूजा और वन्दना की जाती है। अत: वह 'अम्बिका' कहलाती हैं।।२०

विष्णु-भक्तिर्विष्णु-रूपा, विष्णो: शक्ति-स्वरूपिणी।
सृष्टौ च विष्णुना सृष्टा, वैष्णवी तेन कीर्तिता।।२१।।

विष्णु की भक्ति, विष्णु की शक्ति और स्वयं विष्णु का रूप वही है। सृष्टि में विष्णु ने उसकी रचना की अत: वह 'वैष्णवी' के नाम से प्रसिद्ध हुई।।२१

गौर-पीते च निर्लिप्ते, परे ब्रह्मणि निर्मले।
तस्यात्मनः शक्तिरियं, गौरीति तेन कीर्तिता।।२२।।
गुरुः शम्भुश्च सर्वेषां, तस्य शक्तिः प्रिया सती।
गुरुः कृष्णश्च तन्माया, गौरीति तेन कीर्तिता।।२३।।

गौर-पीत से निर्लिप्त जो निर्मल **पर-ब्रह्म** है, उसकी आत्म-भूता शक्ति यही हैं। अतः '**गौरी**' कही जाती हैं। सबके गुरु **शम्भु** हैं, उनकी प्रिय शक्ति **सती** हैं। **कृष्ण** गुरु हैं, उनकी माया होने से '**गौरी**'-नाम से प्रसिद्ध हैं।।२२-२३

तिथि-भेदे कल्प-भेदे, सर्व-वेद-प्रभेदके।
तद्वातौ तेषु विख्याता, पार्वती तेन कीर्तिता।।२४।।

तिथि-भेद में, कल्प-भेद में, सर्व-वेदों के प्रभेदों में उन सबमें विख्यात होने से वह '**पार्वती**' कही जाती हैं।।२४

पर्वतस्य सुता देवी, साऽऽविर्भूता च पर्वते।
पर्वताधिष्ठातृ-देवी, पार्वती तेन कीर्तिता।।२५।।

देवी पर्वत की पुत्री के रूप में पर्वत पर आविर्भूत हुईं। वह **पर्वतों की अधिष्ठातृ देवी** हैं, अतः '**पार्वती**'-नाम से प्रसिद्ध हैं।।२५

सर्व-काले सना प्रोक्ता, विद्यमाना सनातनी।
सर्वत्र सर्व-काले सा, विद्यमाना सनातनी।।२६।।

'**सना**' अर्थात् सभी कालों में रहनेवाली हैं, अतः '**सनातनी**' हैं। सब जगह, सब समयों में वर्तमान रहने से वह '**सनातनी**' हैं।।२६

षोडश नामों की पूजा की परम्परा

अर्थः षोडश-नाम्नां च, कीर्तितश्च महा-मुने!।
यथाऽऽगमं च वेदोक्तमाख्यानं च निशामय।।२७।।

हे **महा-मुनि!** सोलह नामों के ये अर्थ कहे गए। जैसा कि **आगम** में और **वेदों** में कहा, अब उसे सुनो।।२७

प्रथमे पूजिता सा च, कृष्णेन परमात्मना।
वृन्दावने च सृष्ट्यादौ, गो-लोके रास-मण्डले।।२८।।

पहले **परमात्मा कृष्ण** ने उसकी पूजा **वृन्दावन** में की और सृष्टि के आदि में गो-लोक के **रास-मण्डल** में की।।२८

मधु-कैटभ-भीतेन, ब्रह्मणा सा द्वितीयके।

त्रिपुर-प्रेरितेनैव, तृतीये त्रिपुरारिणा।।२९।।

दूसरी बार **ब्रह्मा** ने **मधु** और **कैटभ** नामक राक्षसों से भय-भीत होकर उसकी पूजा की। तीसरी बार **त्रिपुरारी भगवान् शङ्कर** ने **त्रिपुर** नामक **राक्षस** के नाश के लिए उसकी पूजा की।।२९

भ्रष्ट-श्रिया महेन्द्रेण, शापाद् दुर्वाससः पुरा।

चतुर्थे पूजिता देवी, भक्त्या भगवती सती।।३०।।

प्राचीन काल में **दुर्वासा ऋषि** के शाप से श्री-हीन होकर **देव-राज इन्द्र** ने भक्ति-पूर्वक **भगवती सती** देवी की चौथी बार पूजा की।।३०

तदा मुनीन्द्रैः सिद्धेन्द्रैर्मनुना नरैः।

पूजिता सर्व-विश्वेषु, बभूव सर्वतः सदा।।३१।।

इसके बाद **मुनियों, सिद्धों** और **मनुष्यों** के द्वारा सारे संसार में सभी ओर वह सदैव पूजी जाने लगीं।।३१

तेजस्सु सर्व-देवानां, साऽऽविर्भूता पुरा मुने!।

सर्वे देवा ददुस्तस्यै, शस्त्राणि भूषणानि च।।३२।।

हे मुनि! प्राचीन काल में वह **सभी देवताओं के तेज से उत्पन्न** हुईं। देवताओं ने उन्हें शस्त्र और आभूषण प्रदान किए।।३२

दुर्गादयश्च दैयाश्च, निहता गदया तया।

दत्तं स्व-राज्यं देवेभ्यो, वरं च यदभीप्सितम्।

कल्पान्तरे पूजिता सा, सुरथेन महात्मना।।३३।।

दुर्ग आदि राक्षसों का उसने अपनी गदा से नाश किया। **देवताओं** को **स्व-राज्य** और उनके **अभीष्ट वर** को दिया। दूसरे कल्प में **महात्मा सुरथ** ने उनकी पूजा की।।३३

।। ब्रह्म-वैवर्त-पुराणे श्रीदुर्गा-षोडश-नाम-स्तोत्रम्।।

***

श्रीदुर्गा महिम्न-स्तोत्रम्

।।श्री चन्द्रचूड़ उवाच।।

त्वमन्तस्त्वं पश्चात् त्वमसि पुरतस्त्वं च परत–
स्त्वमूर्ध्वं त्वं चाधस्त्वमसि खलु लोकान्तर-चरी।
त्वमिन्द्रस्त्वं चन्द्रस्त्वमसि निगमानामुपनिषत्,
तवाऽहं दासोऽस्मि त्रिपुर-हर-रामे! कुरु कृपाम्।।१।।

श्री चन्द्रचूड़ बोले–हे रामे (भगवति)! तुम्हीं अन्दर हो, तुम्हीं आगे हो, तुम्हीं पीछे हो। तुम्हीं ऊपर हो, तुम्हीं नीचे भी हो। तुम्हीं सब ओर व्याप्त हो। तुम्हीं इन्द्र हो, चन्द्र भी तुम्हीं हो। तुम्हीं **निगम (बेद)** हो, तुम्हीं आगम (तन्त्र) हो। तुम्हीं उपनिषद् (ब्रह्म के समीप रहनेवाली) हो। हे **त्रिपुर-नाशिनि**! मैं आपका दास हूँ, मुझ पर कृपा करें।।१।।

इयान् कालः सृष्टेः प्रभृति बहु-कष्टेन गमितो,
बिना यत् त्वत्-सेवां करुण-रस-कल्लोलिनि, शिवे!।
तदेतद् दौर्भाग्यं मम विषय-तृष्णाख्य-रिपुणा,
हतः शुद्धानन्दं स्पृशामि तव सिद्धेश्वरि! पदम्।।२।।

जब से मेरा जन्म हुआ, तब से मैंने बहुत कष्ट सहे। **हे करुण-रस-सरिते शिवे**! बिना तुम्हारी सेवा किए, मैं विषय-तृष्णा-रूपी शत्रु के द्वारा मर्माहत हो गया, यह मेरा दुर्भाग्य ही है। अतः **हे सिद्धेश्वरि माँ**! मैं आपके पैर छूता हूँ।।२।।

सुधा - धारा - वृष्टेस्तव जननि! दृष्टेर्विषयताम्,
वयं यामो दामोदर-भगिनि! भाग्येन फलितम्।
इदानीं भूतानां ध्रुवमुपरि भूतः पर - मुदा,
न वाञ्छामो मोक्षं विपिन-पथि कक्षं जरदिव।।३।।

हे अमृत की वर्षा करनेवाली माँ! जब से मैं आपकी दृष्टि का विषय हो गया, तब से **हे दामोदर भगवान् की भगिनि**! मेरा भाग्य फलीभूत हो गया। अब तो **हे प्राणियों पर प्रसन्नता प्रकट करनेवाली जननि**! निश्चय ही मुझे मोक्ष नहीं चाहिए, केवल इस अवस्था में जङ्गल का रास्ता ही चाहिए।।३।।

जपादौ नो सक्ता हर - गृहिणि! भक्ताः करुणया,
भवत्या होमत्या कति-कति न भावेन गमिताः।
निदानन्दाकारं भव - जलधि-पारं निज-पदम्,
न ते मातुर्गर्भे जननि! तव गर्भे यदि गताः।।४।।

हे सदा-शिव की गृहिणी ! मैं न जप में आसक्त हुआ और न भक्ति ही की। न यज्ञादि करके विशेष भावों को ही प्राप्त किया। **हे चैतन्य-स्वरूपे !** तुम्हारे चरण संसार-सागर से पार करनेवाले हैं। जो आपकी शरण में आता है, वह फिर माता के गर्भ में नहीं जाता।।४।।

चिदेवेदं सर्वं श्रुतिरिति भवत्या: स्तुति - कथा,
प्रियं भात्यस्तीति त्रि-विधमपि रूपं तव शिवे!।
अणुर्दीर्घं ह्रस्वं महदजरमन्तादि - रहितम्,
त्वमेवं ब्रह्मासि त्वदपरमुदारं न गिरिजे!।।५।।

हे माँ ! वेदों में आपकी ही स्तुति और कथाओं का गान किया गया है। **हे शिवे !** आपका रूप त्रिविध रूप में दिखाई पड़ता है। तुम अणु से भी छोटी और बड़ी से भी बड़ी, आदि और अन्त से रहित हो। **हे गिरिजे !** तुम्हीं ब्रह्म हो, तुमसे बढ़ कर और कोई उदार नहीं है।।५।।

त्वयाऽन्तर्यामिन्या भगवति! वशिन्यादि - सहिते,
विधीयन्ते भावा मनसि जगतामित्युपनिषत्।
अहं कर्त्तेत्यन्तर्विशतु मम बुद्धि: कथमुमे!,
सुबुद्धिस्त्वद्-भक्तौ न भवति कुबुद्धि: क्वचिदपि।।६।।

मेरे अन्तर में रहनेवाली **हे भगवति !** मेरी बुद्धि में **'मैं कर्त्ता हूँ'** यह कुबुद्धि बस गई है, लेकिन तुम्हारी भक्ति से **सुबुद्धि** होती है, इसका ज्ञान कभी भी नहीं होता अर्थात् **हे माँ !** तुम्हारे चरणों की कृपा से सब प्राणियों में सद्-**बुद्धि** उत्पन्न होती है, यह भाव मेरे हृदय में हो।।६।।

न मन्त्रं तन्त्रं वा किमपि खलु विद्यो गिरि-सुते!,
क्व यामः, किं कुर्मस्तव चरण-सेवा न रचिता।
अये मात:! प्रात: - प्रभृति दिवसास्तावधि वयम्,
कुबुद्ध्याहङ्कार्ये शिव शिव न यामो निज-वय:।।७।।

हे गिरि-कन्यके ! मैं न मन्त्र जानता हूँ, न तन्त्र। मुझे कुछ भी ज्ञान नहीं है। कहाँ जाऊँ, क्या करूँ? तुम्हारे **चरणों की सेवा** मैंने नहीं की। **हे मात: !** प्रात: से लेकर पूरा दिन **कु-बुद्धि** से हम **अहङ्कार** में ही बिताते हैं, अपना जीवन **कल्याण-कारी आपकी भक्ति** में नहीं व्यतीत करते।।७।।

इहामुष्मिन् लोके ह्यपि न विषये प्रेम-कर वै,
न मे वैरी कश्चिद् भगवति!, भवानि! त्रि-भुवने।
गुणाम्नामाधारं निगम - गण - सारं तव पदम्,
मनो वारं वारं जपति च विनोदं च भजते।।८।।

इस संसार में विषय से प्रेम करनेवाले, न मेरे कोई वैरी हैं, न प्रेमी। हे **भगवति**!, **त्रिभुवन-स्वरूपे भवानी**! सम्पूर्ण गुणों का आधार-वेद और **तन्त्र** का सार तो **आपका चरण** है, जिसे मेरा मन बारम्बार स्मरण करता रहता है और आनन्द को प्राप्त करता है।।८।।

महा - माये! काये मम भवति यादृक् खलु मनो,
मनस्ते संख्याने नहि भवति तादृक् कथमुमे ?
त्वमेवान्तर्मातर्निगमयसि बुद्धिं त्रि - जगताम्,
न जाने श्री-जानेरपि न विदितस्तेऽत्र महिमा।।९।।

हे महा-माये! मेरे शरीर में जिस प्रकार का मेरा **मन** है, इसकी गति की गणना करने में **हे उमे!** मैं समर्थ नहीं हूँ। **हे भगवति!** तुम्हीं तीनों लोकों के **अन्तर्मन** में स्थित होकर सभी की बुद्धि को नियन्त्रित करती हो। मैं जानकर भी **हे जननि!** तुम्हारी महिमा को नहीं जानता।।९।।

अमीषां वर्णानां ऋतु - करण-सम्पूर्ण - वयसाम्,
निकाम्यं काव्यानामुरसि समुदायं प्रकटितम्।
स्तनौ मेरू मत्वा स्थगितममृतोपाख्यमुभयम्,
दया-धाराधारं मम जननि! हारं तव भजे।।१०।।

सभी **वर्णों (अक्षरों), ऋतुओं, करण** और सम्पूर्ण जीवन के **काव्य-समुदायों** को आपने अपने हृदय से प्रकट किया है। **हे माँ!** आपके **दोनों स्तनों** को **मेरु पर्वत** और इनमें **अमृत** की स्थिति मानकर मैं आपकी **दया** और **अमृत की धारा** की कामना से आपका भजन करता हूँ।।१०।।

स्तन-द्वन्द्वं स्कन्द-द्विप-मुख-मुखे यत् स्नुत-मुखम्,
कदाचिन्मे मातर्वितरतु मुखे स्तन्य - कणिकाम्।
अनेनायं धन्यो जगदुपरि मान्योऽपि भवताम्,
कुपुत्रे सत्-पुत्रे न हि भवति मातुर्विषमता।।११।।

हे माँ! जिन **दोनों स्तनों** को आप **स्कन्द (कार्तिकेय)** और **द्विप-मुख (गणेश)** के मुख में पिलाती हैं, कभी उन्हीं स्तनों के दुग्ध के कुछ कण मेरे भी मुख में प्रदान करें। इससे **हे माँ!** मैं संसार में धन्य और मान्य हो जाऊँगा क्योंकि **कुपुत्र** और **सत्पुत्र** में **माता** के लिए भेद नहीं होता।।११।।

जगन्मूलं शूलं ह्यनुभवति कूलं कथमिदम्,
द्विधा कुर्वे सर्वेश्वरि! मम तु गर्वेण फलितम्।
पद - द्वन्द्वं द्वन्द्व-व्यतिकर-हरं द्वन्द्व - सुखदम्,
गुणारामे रामे कलय हृदि कामेश्वरि! सदा।।१२।।

संसार के मूल सुख और दु:ख का अनुभव कैसे होता है? यह दो प्रकार का अनुभव हे सर्वेश्वरि! केवल मेरे गर्व (अभिमान) का ही फल है। आपके युगल चरणों का वन्दन, सुख और दु:ख के द्वन्द्व को दूर करनेवाला तथा केवल सुख देनेवाला है। हे गुणों से परे, योगियों के चित्त में रमण (विहार) करनेवाली कामेश्वरि! सदा मेरे हृदय में निवास करो।।१२।।

अहो-रात्रं गात्रं समजनि न पात्रं मम मुदा,
धनायत्तं चित्तं तृणमपि तु निश्चिन्तमभवत्।
इदानीमानीता कथमपि भवानी हृदि मया,
स्थितं मन्ये धन्ये पथि कथमधन्येऽहमुचितः।।१३।।

हे मातः! मैं जब से पैदा हुआ, दिन-रात कभी प्रसन्न नहीं रहा। धन की तृष्णा से, चित्त में तृण-मात्र शान्ति नहीं हुई। हे भवानि! हृदय में आपके चिन्तन से मैं अपने को धन्य मानता हूँ। मैं कैसे कहूँ कि अब भी मैं दु:खी हूँ क्योंकि यह कहना अनुचित है।।१३।।

निराकारामारादधि हृदयमाराधित - वता,
मया मायातीताऽसित-सकल-कायापहतये।
अहं कोऽहं सोऽहं मतिरिति विमोहं हत-वति,
कृता हन्तानं तामुपनयति सन्तानक-वति।।१४।।

निराकार रूप में हृदय में आराधना की जानेवाली, हे माँ! माया-कृत अतीत के सम्पूर्ण कायिक दोषों को नष्ट करनेवाली! मैं कौन हूँ? मैं वही हूँ अर्थात् ब्रह्म हूँ—इस तत्त्व-ज्ञान का बोध कराकर मोह को नष्ट करनेवाली आप जगज्जननी हैं।।१४।।

त्वदंघ्रेरुद् - द्योतादरुण-किरण - श्रेणि - गमनात्
समुद्भूता ये ये जगति जयिनः शोण-मणयः।
त एते सर्वेषां शिरसि विदुषां भान्ति भुवने,
त्वदीयादन्यः को भवति जन-वन्द्योऽद्य गिरिजे!।।१५।।

आपके चरणों की लालिमा के किरण-जाल से उत्पन्न संसार में जो भी विशुद्ध मणियाँ हैं, वे आज संसार में सभी विद्वानों के शिर पर शोभायमान हैं अर्थात् आपके चरणों की कृपा-रूपी मणि प्राप्त कर संसार में विद्वान् लोग पूजित हैं। हे गिरिजे! आपकी कृपा के बिना संसार में भला कौन व्यक्ति वन्दनीय हो सकता है?।।१५।।

अकार्षीत् सोऽमर्षी भुवनमपरं गाधि - तनयः,
शशापान्यो लक्ष्मीमपि वदपरो ह्यर्णवमिति।

सपर्या-माहात्म्यं तव जननि! तादात्म्य-फलदम्,
कियद् वक्ष्ये यक्षेश्वर-किरण-दत्तं भगवति !।।१६।।

चन्द्र-वंश में उत्पन्न **विश्वामित्र** ने दूसरे संसार की रचना की, बाद में **लक्ष्मी** को शाप भी दिया। **हे माता!** यह आपकी सेवा की ही महिमा है। **हे भगवति!** कितना कहें, **यक्षेश्वर कुबेर** को अपनी कृपा की किरण प्रदान की। आपकी महिमा अपरम्पार है।।१६।।

अमी देवाः सेवां विदधति यतो मञ्चक-तया,
शिवोऽप्यच्छच्छाया - रचित - रुचिर - प्रच्छदतया।
कृतार्थी कर्तुं मां परम-शिव-वामाङ्क - निलया,
पर-ब्रह्म-स्फूर्तिस्तव जयति मूर्तिः स-करुणा।।१७।।

ये देवता भी आपके **आसन-शय्या की सेवा** करते हैं। **भगवान् शिव** भी अपनी कृपा-छाया से सुन्दर छाया प्रदान करते हैं। **हे परम शिव के वामाङ्ग में निवास करनेवाली भगवति!** मुझे कृतार्थ करने के लिए **परम ब्रह्म को चैतन्य-रूप स्फूर्ति देनेवाली** आपकी **करुणा-मयी मूर्ति** की जय हो।।१७।।

समुद्धर्तुं भक्तान् प्रभवति विहर्तुं जगदिदम्,
गतिं वायोर्बध्वा विनिमयति रूपं च नियमात्।
यदृच्छा यस्येच्छा न च भजन-विच्छेद-भयतो,
नमस्ते भक्ताय ध्रुव-भजन - सक्ताय गिरिजे!।।१८।।

हे माँ! भक्तों का उद्धार करने के लिए और उनके कष्टों को दूर करने के लिए आप संसार में अवतार लेती हैं तथा वायु की गति से अपने स्वरूप का स्वेच्छा से नियमन करती हैं। जिसकी जैसी इच्छा होती है, उस भक्त को उसी रूप से आप दर्शन देती हैं। **हे माँ गिरिजे!** मैं आपके **निरन्तर भजन** के लिए आपको प्रणाम करता हूँ।।१८।।

उमा माया माता कमल-नयना कृष्ण-भगिनी,
भवानी दुर्गा वा मतिरमर-लक्ष्मीति तरला।
महा - विद्या देवी प्रकृति-रज-जायेति जपताम्,
भवन्ति श्रीविद्ये तव जननि! नामानि निधयः।।१९।।

हे भगवति! उमा, माया, माता, कमल के समान नेत्रोंवाली, कृष्ण-भगिनी, भवानी, दुर्गा, मति, अमर-लक्ष्मी, तरला, महा-विद्या, देवी, ब्रह्माणी, श्री विद्या, वन-दुर्गा-ये आपके नाम परम कल्याणकारी हैं। मैं इन्हीं **पावन नामों का जप** करता रहूँ।।१९।।

दिशां पाला बाला हर- हरि-सरोजासन-मुखा—
स्त्वया दुर्गे! सर्वे कति-कति न भक्ता अधिकृताः।
स्वयं रक्ता भक्तावहमधिकृतो नाधिमगमम्,
सुखे वा दुःखे वा मम समतया यान्तु दिवसाः।।२०।।

दिक्-पालों के रूप में, ब्रह्मा, विष्णु और महेश के रूप में भी हे माँ दुर्गे! आप भला किस-किस रूप में भक्तों को नहीं अपनातीं अर्थात् हे जननि! इन विविध देवताओं के रूपों में शक्ति-स्वरूपा आप ही भक्तों का हित करती हैं। अधिक क्या, आप स्वयं भक्ति के वश में हैं। हे माँ! सुख और दुःख—दोनों समय मेरे दिन आपके ही स्मरण में व्यतीत हों।।२०।।

भवत्या भक्तानां यदि किमपि कश्चिद् विधि-कृते,
पुरो वा पश्चाद् वा कपट-दुरितेषां पर-वशः।
जनश्चेत् संन्यासादपि जपति नारायण-पदम्,
ततोऽप्येनं देवी-नयन-पथ-वीथीं गमयति।।२१।।

तुम्हारे भक्तों को भाग्य-वश यदि पूर्व-जन्म अथवा बाद के किसी अदृष्ट पाप के कारण कष्ट होता है, तो आप उस व्यक्ति की रक्षा करती हैं। हे वात्सल्य-मयि! यदि कोई व्यक्ति संन्यास लेकर 'नारायण' शब्द का भी जप करता है, तो हे नारायणि! वह भी आपकी कृपा-दृष्टि के सुपथ को प्राप्त कर देव-लोक को जाता है।।२१।।

क्रिया वा कर्त्ता वा करणमपि वा कर्म यदि वा,
प्रणीयन्ते चेष्टा जगति पुरुषैर्भाव-कलुषैः।
समर्प्य स्वात्मानं तव तु पदयोरिन्द्र-पदवीम्,
पदं वा तद्-विष्णोर्गणयति न भक्तोऽयमचलः।।२२।।

संसार का कोई कर्त्ता कुभाव से भी किसी कारण (पूजा) विधि (क्रिया) द्वारा यदि निष्काम-भाव से आपकी उपासना करता है, तो वह इन्द्र की पदवी प्राप्त करता है अथवा अविचल विष्णु-पद (वैकुण्ठ) लोक को जाता है।।२२।।

स्वयं माया - कार्याद्युदय-करणे कौतुक-वती,
शिवादीनां सर्ग-स्थिति-विलय-कर्माणि विभृषे।
अयं भक्तो नाम्ना भगवति! शुभः स्यात् तव यदा,
भवान्याः भक्तानामशुभमपरं तेऽपि न कृतम्।।२३।।

आप स्वयं अपनी कौतुक-माया से सृजन करती हैं तथा शिवादि देवता आपकी शक्ति के भय से ही संसार की उत्पत्ति, पालन और विनाश करते हैं। यह भक्त (चन्द्रचूड़) भी

केवल नाम-मात्र का भक्त है। इसका भी कल्याण हो। भला आपके भक्तों का कहीं अशुभ हो सकता है!।।२३।।

धरित्री ह्यम्भोधिस्त्वमपि दहनस्त्वं च पवन–
स्त्वमाकाशस्त्वं च ग्रसति पुरुषस्तेन सहितम्।
ग्रसन्ती ब्रह्माण्डं प्रकृतिरपि दासी पशुपते–
र्यदाऽऽसीत् संहारे जननि! तव संहार-महिमा।।२४।।

तुम्हीं **पृथ्वी** हो, **समुद्र** हो। तुम्हीं **अग्नि** हो, **वायु** हो, **आकाश** हो और तुम्हीं **काल-पुरुष** भी हो। **पशुपति शिव की सेविका** समस्त ब्रह्माण्ड को ग्रस लेनेवाली **प्रकृति** हो। हे माँ! **शिव** के द्वारा जो संहार होता है, उस संहार की महिमा आपकी ही है।।२४।।

स्फुरत् तारा-माल्यं ग्रह-निवह-नीराजन-विधि–
र्हविर्धूमो धूपो मलय-पवमानः परिमलः।
इदं ते नैवेद्यं विविध - रस-वेद्यं खलु सुखम्,
सपर्या-मर्यादा ध्रुवमियमुमे! ब्रह्म-निलये!।।२५।।

चमकता हुआ **तारा-मण्डल** आपकी माला है, **ग्रह-समूह** आपके नीराजन के लिए आरती-दीप हैं। यह बहता हुआ **सुगन्धि-पूर्ण समीर** आपके लिए धूप है। विविध सुख-कारी **छः रस** ही आपके नैवेद्य हैं। हे **ब्रह्म-लोक-निवासिनी उमे!** आपकी पूजा की यही विराट् मर्यादा है।।२५।।

नवाधारा-सृष्टिः स्फुटित - नवधा शब्द-रचना,
नवानां खेटानामुपरि नवधाऽप्यर्चित-पदे!।
नवानां संख्यानां प्रकृतिरग-राजन्य - तनये,
नव-द्वीपी देवी त्वमसि नव-चक्रेश्वरि शिवे!।।२६।।

आपके **नवार्ण-मन्त्र** के स्फुटित शब्द ही **सृष्टि-रचना के आधार** हैं। **नौ शब्दों** के द्वारा स्तवन की जानेवाली और **नौ प्रकार के रूपों में** पूजित होनेवाली, **नौ संख्या** की, नवों द्वीपों में पूजा की जानेवाली, **हे शिवे! नौ चक्रों की अधीश्वरी** तुम्हीं हो।।२६।।

यदा कृष्याकृष्या तपति भवदम्बा क्व नु गता,
बलात्कारादारादिति यम-भटे नाम विधया।
तदैवैनं दीनं स्पृशति वदने प्रश्रय - वती,
विधूयां वा धूर्तं गुहमपि धयन्तं भगवती।।२७।।

जब **ब्रह्मा** की प्रेरणा से **यम-दूत** द्वारा बल-पूर्वक खींचा गया यह दुःखी जीव कष्ट पाता है, तब **हे माँ!** आप कहाँ चली जाती हैं? दूध पीते हुए **कार्तिकेय** को छोड़कर **आश्रय-दायिनी भगवती** तभी इस दीन के मुख को स्पर्श करती हैं और मुक्ति प्रदान करती हैं।।२७।।

हविर्धाने गीतं श्रुति - सिरसि-निर्धारित - मितम्,
शिवस्यार्धाङ्गस्थं परम - महदद्धाममनः।
यदा च क्षाणस्ते चरण-तल-लाक्षा-रस-जलै-
र्मुखं प्रक्षाल्यायं गणयति न लक्षाणि कृतिनाम्।।२८।।

हवन के समय वेदों में **स्वाहा**-शब्द से उच्चारित की जानेवाली, **शिव के अर्द्धाङ्ग में रहनेवाली** आपका निवास **परम धाम** है। **हे माँ!** यदि आपके **अलक्तक लगे हुए चरण** की एक बूँद भी मेरे मुख में पड़ जाए, तो करोड़ों किए हुए पाप तत्क्षण नष्ट हो जाएँ और मैं आपका भाग्य-शाली भक्त बन जाऊँ।।२८।।

गुरूणां सर्वेषामयमुपरि विद्या - गुरुरभून्,
मनूनां सर्वेषामयमुपरि जातो भुव-मनुः।
कलानां सर्वासामिथमुपरि लक्ष्मीः पर - कला-
महिम्नां सर्वेषामयमुपरि जागर्ति महिमा।।२९।।

हे माँ! फिर तो मैं **सभी गुरुओं का गुरु—श्रीविद्या का गुरु** हो जाऊँगा। संसार के सभी मानवों से ऊपर मानव बन जाऊँगा। सभी कलाओं में **श्रेष्ठ लक्ष्मी-कला** से युक्त श्रीमान् बन जाऊँगा तथा महिमा-शालियों से भी ऊपर महिमा-युक्त बन जाऊँगा।।२९।।

यदाऽऽलापादापादित-विविध-विद्या-परिणतिः,
करे कृत्वा मोक्षं व्यवहरति लोकं प्रभुतया।
प्रणादेवाशा ये प्रभवति दुरापे च पुरुष-
स्तदेतन्माहात्म्यं विरल-जन-सात्म्यं तव शिवे!।।३०।।

अधिक आलाप करने से क्या! विविध विद्याओं का परिणाम यही है कि **भोग** और **मोक्ष**—ये दोनों हाथों में आपके भक्तों को प्राप्त हैं। **देवताओं को भी शरण देनेवाली माँ!** कठिनता से प्राप्त होनेवाली **हे शिवे!** बहुत ही कम लोग आपको प्राप्त कर पाते हैं—यही आपकी महिमा है।।३०।।

याभिः शङ्कर- काल-कृत्य-दहन-ज्वाला-समुत्सारणम्,
याभिः शुम्भ-निशुम्भ-दर्प-दलनं याभिः जगन्मोहनम्।
याभिः भैरव-भीम-रूप-दलनं सद्यः कृतं मेऽन्वहम्,
दारिद्र्यं दलयन्तु तास्तव दृशो दुर्गे! दया-मेदुराः।।३१।।

जिनके द्वारा शङ्कर के **संहार-कर्म की अग्नि-ज्वाला** निकलती है, जिनके द्वारा **शुम्भ-निशुम्भ** के **अहङ्कार का नाश** होता है, जिनके द्वारा **संसार का मोहन** होता है, जिनके द्वारा **भयङ्कर भयानक रूप का तत्काल दमन** होता है, वे आपके **दया-पूर्ण नेत्र** मेरे दुःख-दारिद्र्य को नष्ट करें।।३१।।

याभिः दुर्गतया कु-शासन पुनः स्वाराज्य-दानं कृतम्,
याभिः भारत-संसदि द्रुपदजा-लज्जा जवाद् रक्षिता।
याभिः कृष्ण-गृहीत-हस्त-कमलैस्त्राणं कृतं मेऽन्वहम्,
दारिद्र्यं दलयन्तु तास्तव दृशो दुर्गे! दया-मेदुराः।।३२।।

जिनके द्वारा **दुर्ग का नाश** कर देवों को पुनः **स्वर्ग का राज्य** दिया गया, जिनके द्वारा भारत की सभा में **द्रौपदी की लज्जा** की तुरन्त रक्षा की गई, जिनके द्वारा **कृष्ण के कर-कमलों** ने **रक्षा-कार्य** किया, वे आपके **दया-पूर्ण नेत्र** मेरे **दुःख-दारिद्र्य** को नष्ट करें।।३२।।

याभिः विष्णु-कृते कृतं कुरु-कुल-प्रध्वंसन सङ्गरे,
प्राद्युम्नेर्हृदि मुद्गरस्य कुसुम-स्रग् याभिराकल्पिता।
कंसाद्याभिरपि व्यधायि वसुधा गोपाय गो-पालनम्,
दारिद्र्यं दलयन्तु तास्तव दृशो दुर्गे! दया-मेदुराः।।३३।।

जिनके द्वारा युद्ध में **कौरव-वंश** का नाश **विष्णु** ने किया, जिनके द्वारा **प्रद्युम्न** के हृदय में **मुद्गर** के स्थान में **पुष्प-माला** की रचना हुई, जिनके द्वारा **कंसादि का वध** होकर ग्वालों के लिए गो-पालन हेतु पृथ्वी सुरक्षित हुई, वे आपके **दया-पूर्ण नेत्र** मेरे **दुःख-दारिद्र्य** को नष्ट करें।।३३।।

याभिः स्थावर-जङ्गमं कृतमिदं याभिः सदा पालितम्,
याभिः भासितमाक्रमेण च पुनः याभिः सदा संहृतम्।
याभिः दुःख-महाम्भसो भव-महा-सिन्धोर्न के तारिता,
दारिद्र्यं दलयन्तु तास्तव दृशो दुर्गे! दया-मेदुराः।।३४।।

जिनके द्वारा इस **स्थावर-जङ्गम की सृष्टि** होती है और जिनके द्वारा इन सबका सदा पालन होता है, जिनके द्वारा पुनः इनका संहार होता है, जिनके द्वारा **संसार-रूपी महा-सागर के दुःख-पारावार से सबकी रक्षा** होती है, वे आपके **दया-पूर्ण नेत्र** मेरे **दुःख-दारिद्र्य** को नष्ट करें।।३४।।

।। ॐ जगदम्बार्पणामस्तु।।

श्री दुर्गाष्टक-स्तोत्रम्

प्रणम्य विबुधा दुर्गां, ब्रह्म-विष्णु-शिवादयः।
संहृष्टाश्चास्तुवन् भक्त्या, परां तां त्रिपुरा-कलाम्।।१।।

नमो नमस्ते जगतां विधात्रि!,
संहर्त्रि! सर्वान्तर-सत्य-रूपे!
प्रपन्न - लोकाघ - विनाश - हेतु,
दयाम्बु-राशे! परिपाहि दुर्गे!।।२।।

महा-भयाद् दानव-राज-रूपात्,
त्वया समस्तं जगदेतदद्य।
त्रातं यथा क्रूर-महाहि-ग्रस्त,
भेकं तथाऽस्मान् परिपाहि दुर्गे!।।३।।

यदा वयं दुर्विपदाऽऽपदोघैः,
ग्रस्तास्तदा त्वं जगतां विधात्रो।
लीला-वपुः प्राप्य विमृष्ट-मात्रा,
विपन्निमग्नान् परिपाहि दुर्गे!।।४।।

यत् तेऽखिलं लोक-वितानमेतत्,
तनोः कलांश-प्रविभक्त-संस्थम्।
तदन्तरे दर्शयसि स्वरूपम्,
माया तवैतत् परिपाहि दुर्गे!।।५।।

मायात्मिका त्वं निज-निर्मलेऽम्ब!
यतो जगच्चित्रमुदीर्यसेऽङ्गे।
विचित्र-रूपाऽपि चिदेक-रूपा,
अविभाव्य-शक्तिः परिपाहि दुर्गे!।।६।।

यत् ते पदाब्जैक-समाश्रयास्ते,
विचित्र-कृत्या विधि-विष्णु-मुख्याः।
तत् ते विचित्राकृतिरत्र का स्यात्,
स्तुमः कथं त्वां परिपाहि दुर्गे!।।७।।

दुर्गेषु नित्यं भव-सङ्कटेषु,
दुरन्त-चिन्ता हि निगीर्यमाणान्।
शरण्य-हीनान् शरणागतार्ति–
निवारिणी त्वं परिपाहि दुर्गे!।।८।।

***

श्री दुर्गोपनिषत् (अथर्वशीर्ष)

ॐ सर्वे वै देवा देवीमुपतस्थुः—'काऽसि त्वं महा-देवि?'

साऽब्रवीत्—'अहं ब्रह्म-स्वरूपिणी। मत्तः प्रकृति-पुरुषात्मकं जगत्। शून्यं चाशून्यं च। अहमानन्दाऽनानन्दौ। अहं विज्ञानाविज्ञाने। अहं ब्रह्मा-ब्रह्मणी (द्वे ब्रह्मणी) वेदितव्ये।।१।।

'अहं पञ्च-भूतान्यहं पञ्च-तन्मात्राणि। अहमखिलं जगत्। वेदोऽहमवेदोऽहम्। विद्याऽहमविद्याऽहम्। अजाऽहमनजाऽहम्। अधश्चोर्ध्वं तिर्यक् चाहम्। अहं रुद्रैर्वसुभिश्चरामि। अहमादित्यैरुत विश्वे-देवैः। अहं मित्रा-वरुणावुभौ बिभर्मि। अहमिन्द्राग्नी अहमश्विनावुभौ। अहं सोमं त्वष्टारं पूषणं भगं दधामि। अहं विष्णुमुरु-क्रमं ब्रह्माणमुत प्राजापत्यं दधामि। अहं दधामि द्रविणं हविष्मते सु-प्रजाय यजमानाय सुन्वते। अहं राष्ट्री-सङ्गमनी वसूनां चिकीतुषी प्रथमा यज्ञियानाम्। अहं सुवे पितरमस्य मूर्धन् मम योनिरप्स्वन्तः समुद्रे। य एवं वेद, स दैवीं सम्पदमाप्नोति।'

ते देवा अब्रुवन्—नमो देव्यै महा-देव्यै, शिवायै सततं नमः। नमः प्रकृत्यै भद्रायै, नियताः प्रणताः स्म ताम्।।२।।

तामग्नि-वर्णां, तपसा ज्वलन्तीं, वैरोचनीं कर्म-फलेषु जुष्टाम्। दुर्गां देवीं शरणमहं प्रपद्ये। असुरान्नाशयित्र्यै ते नमः।।३।।

देवीं वाचमजनयन्त देवास्तां विश्व-रूपाः पशवो वदन्ति। सा नो मन्द्रेषमूर्जं दुहाना धेनुर्वागस्मानुप-सुष्टुतैतु। काल-रात्रिं ब्रह्म-स्तुतां वैष्णवीं स्कन्द-मातरम्। सरस्वतीमदितिं दक्ष-दुहितरं नमामः पावनां शिवाम्। महा-लक्ष्म्यै च विद्महे सर्व-शक्त्यै च धीमहि, तन्नो देवी प्रचोदयात्। अदितिर्ह्यजनिष्ट दक्ष! या दुहिता तव, तां देवा अन्वजायन्त भद्रा अमृत-बन्धवः। कामो योनिः कमला वज्र-पाणिर्गुहा हस्ता मातलिश्चायमिन्द्रः। पुनर्गुहा सकला मायया चापृथक् त्वेषा विश्व-माताऽति-विद्या।। एषाऽऽत्म-शक्तिः, एषा विश्व-मोहिनी। पाशांकुश-धनुर्वाण-धरा। एषा श्रीमहा-विद्या। य एवं वेद, स शोकं तरति। नमस्ते भगवति! मातरस्मान् पाहि सर्वतः। सैषाऽष्टौ वसवः सैषैकादश-रुद्राः। सैषा द्वादशादित्याः। सैषा विश्वे-देवाः, सोमपा असोमपाश्च। सैषा यातुधाना, असुरा, रक्षांसि, पिशाचा, यक्षाः, सिद्धाः। सैषा सत्त्व-रजस्तमांसि। सैषा ब्रह्म-विष्णु-रुद्र-रूपिणी। सैषा प्रजापतीन्द्र-मनवः। सैषा ग्रह-नक्षत्र-ज्योतींषि। कला-काष्ठादि-काम-रूपिणी। तामहं प्रणौमि नित्यं। पापाप-हारिणीं देवीं भुक्ति-मुक्तिं-फल-प्रदाम्। अनन्तां विजयां शुद्धां शरण्यां शारदां शिवाम्।।४।।

वियदीकार-संयुक्तं, वीति-होत्र-समन्वितम्।
अर्धेन्दु-लसितं देव्या, वीजं सर्वार्थ-साधकम्॥५॥

एवमेकाक्षरं मन्त्रं, यतयः शुद्ध - चेतसः।
ध्यायन्ति परमानन्दं, मम ज्ञानाम्बु - राशयः॥६॥

वाङ् - माया-ब्रह्मभूस्तस्मात् षष्ठं वक्त्र-समन्वितम्।
सूर्योऽवाम - श्रोत्र-विन्दु-संयुक्तष्टात् तृतीयकः॥७॥

नारायणेन सम्मिश्रो, वायुश्चाधार-युक् ततः।
विच्चे नवार्णकोऽर्णः स्यात्, परमानन्द-दायकः॥८॥

हृत्-पुण्डरीक-मध्यस्थां, प्रातः-सूर्य-सम-प्रभाम्।
पाशांकुश - धरां सौम्यां, वरदाभय - हस्तकाम्॥९॥

त्रिनेत्रां रक्त - वसनां, भक्त-काम-दुघां भजे।
नमामि त्वां महा-देवीं, महा-भय-विनाशिनीम्॥१०॥

महा-दारिद्र्य-शमनीं, महा-कारुण्य-रूपिणीम्। यस्याः स्वरूपं ब्रह्माद्या न जानन्ति, तस्मादुच्यते अज्ञेया। यस्या अन्तो न लभ्यते, तस्मादुच्यते अनन्ता। यस्या गृहं नोपलक्ष्यते, तस्मादुच्यते अलक्ष्या। यस्या जननं नोपलभ्यते, तस्मादुच्यते अजा। एकैव सर्वत्र वर्त्तते, तस्मादुच्यते एका। एकैव विश्व-रूपिणी, तस्मादनेका। अनन्त-तपो-वाच्यज्ञेयाऽनन्ताऽलक्ष्या-ऽजैकाऽनेका। मन्त्राणां मातृका देवी, शब्दानां ज्ञान-रूपिणी। ज्ञानानां चिन्मयाऽतीता, शून्यानां शून्य-साक्षिणी। यस्याः पर-तरं नास्ति, सैषा दुर्गा प्रकीर्त्तिता। तां दुर्गां दुर्गमां देवीं, दुराचार-विघातिनीम्। नमामि भव-भीतोऽहं संसारार्णव-तारिणीम्।।११।।

य इदमथर्व-शिरसमोऽधीते, स पञ्चाथर्व-शीर्ष-फलमवाप्नोति। इदमथर्व-शीर्षमज्ञात्वा, योऽर्चां स्थापयति, शत-लक्षं प्रजप्त्वाऽथ नार्चा-सिद्धिं च विन्दति। शतमष्टोत्तरं चास्य, पुरश्चर्या-विधिः स्मृतः।।१२।।

दश-वारं पठेद् यस्तु, सद्यः पापैः प्रमुच्यते।
महा-दुर्गाणि तरति, महा-देव्याः प्रसादतः॥१३॥

सायमधीयानो दिवस-कृतं पापं नाशयति, प्रातरधीयानो रात्रि-कृतं पापं नाशयति। सायं-प्रातः प्रयुञ्जानोऽपापो भवति। निशीथे तुरीय-सन्ध्यायां जप्त्वा, वाक्-सिद्धिर्भवति। नूतनायां प्रतिमायां जप्त्वा, देवता-सान्निध्यं भवति। प्रतिष्ठायां प्राणानां प्रतिष्ठापयति। भौमाश्विन्यां महा-देवी-सन्निधौ जप्त्वा, महा-मृत्युं तरति। महा-मृत्युं तारयति, य एवं वेद।।१४।।

***

श्रीदुर्गा-सूक्तम्

जात-वेदसे सुनवाम सोम,
मरातीयतो निदहाति वेदः।
स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा,
नावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः।।१।।
तामग्नि-वर्णां तपसा ज्वलन्तीम्,
वैरोचनीं कर्म-फलेषु जुष्टान्।
दुर्गां देवीं शरणमहं प्रपद्ये,
सुतरसि तरसे नमः।।२।।
अग्ने! त्वं पारयानव्यो अस्मान्,
स्वस्तिभिरति-दुर्गाणि विश्वा।
पूश्च पृथ्वी बहुला न ऊर्वी,
भवातोकाय तनयाय शंयोः।।३।।
विश्वानि नो दुर्गहा जात-वेदः,
सिन्धुं न नावा दुरितातिपर्षि।
अग्ने! अत्रि-वन्मनसा गृणानो,
अस्माकं बोध्यविता तनूनाम्।।४।।
पृतनाजितं सहमानमुग्र–
मग्निं हुवेम परमाथ्सधस्तात्।
स नः पर्यदति दुर्गाणि विश्वा,
क्षामद् देवो अति-दुरितात्यग्निः।।५।।
प्रत्नोषिक मीड्यो अध्वरेषु,
सनाच्च होता नव्यश्च सथ्सि।
स्वां चाग्रे तनुवं पिप्रयस्वा–
स्मभ्यं च सौभगमायजस्व।।६।।
गोष्ठीभिर्जूष्टमयुजो निषिक्तम्,
तवेन्द्र - विष्णोरनुसञ्चरेम।
नाकस्य पृष्ठमभि - संवसानो,
वैष्णवीं लोक इह मादयन्नाम्।।७।।

***

श्रीदुर्गा-नीराजनम्

जय देवि! जय देवि!, जय मातः त्रिपुरे!।
दासानुग्रह-कारिणि!, ईश्वरि! सुख-वरदे!।
जय देवि! जय देवि!, जय मातः त्रिपुरे!।

दुर्गे! दुर्गति-नाशिनि!, भव-सागर-तारे!।
मृगेन्द्र-वाहन-गिरिजे!, दानव-संहारे!।।
अष्टादश-भुज-मूर्तिः!, कण्ठ-रूढ-माले!।
सप्त-शृङ्ग-निवासनि!, रुद्रात्मक-शक्ते!।।
जय देवि! जय देवि!, जय मातः त्रिपुरे!।।१।।

बालार्कारुण-शोभित-बन्धूक-कुसुमाभे!।
कुंकुम-शोभित-देहे!, दाडिम-कुसुमाभे!।।
पादाहत - महिषासुर - देवासुर - सर्गे!।
नाना-दानव-मर्दिनि!, अलि-कुल-रिपु-वर्गे!।।
जय देवि! जय देवि!, जय मातः त्रिपुरे!।।२।।

जय त्रिपुरासुर-मर्द्दिनि!, मर्दय मम दोषान्।
तारय तारय मातः, भव-जल-कूपस्थान्।।
काम-क्रोधादीन् मम, मारय मारय देहस्थान्।
करुणा-द्रष्ट्या माता, रक्षय निज-भक्तान्।।
जय देवि! जय देवि!, जय मातः त्रिपुरे!।।३।।

मूले चाधिष्ठाने, मणिपूरे चक्रे।
हृदयेनाहत - चक्रे, षोडश - दल - पद्मे।।
आज्ञा-चक्रे बालय, बालय कृत-वलये।
ब्रह्म-स्थाने विहरसि, मातः शिव-सहिते।।
जय देवि! जय देवि!, जय मातः त्रिपुरे!।।४।।

विधि-हरि-शङ्कर-वन्द्ये!, पण्डित-जन-वन्द्ये!।
सनकादिक-मुनि-वन्द्ये!, यक्षासुर-वन्द्ये!।।
नारद-तुम्बरु-किन्नर-गीते!, सुर-वन्द्ये!।
अघ-नाशिनि! भव-शोषिणि!, मातः सुख-सहिते!।।
जय देवि! जय देवि!, जय मातः त्रिपुरे!।।५।।

***

मुम्बई-शाक्त-सम्मेलन (आठवाँ अधिवेशन)

संक्षिप्त विज्ञप्ति

परम पूज्य गुप्तावतार बाबाश्री की 'साधना'-भूमि मुम्बई

'मुम्बई-शाक्त-सम्मेलन' के आठवें अधिवेशन के मुख्य-अतिथि **श्री ऋतशील शर्मा जी** ने सभा को सम्बोधित करते हुए कहा कि–**'मुम्बई'** भारत की केवल **आर्थिक नगरी** ही नहीं है। **'मुम्बई'** की अधिष्ठात्री **भगवती महा-लक्ष्मी** अथवा **दसवीं महा-विद्या भगवती कमला** हैं। यह **मुमुक्षुओं की नगरी** भी है। यहाँ बहुत उच्च कोटि के महात्माओं ने साधनाएँ भी की हैं। हमारे **परम गुरु परम पूज्य गुप्तावतार बाबाश्री** की भी यह **'साधना'-भूमि** रही है।

'मन्त्रात्मक सप्तशती', **'सार्थ सौन्दर्य-लहरी'** आदि ग्रन्थों में **गुप्तावतार बाबाश्री** ने **मुम्बा देवी की सरल आराधना** के लिए स्पष्ट रूप से **'मुं'-वीजाय नमः षडारे-लिङ्गे** बताया है। अतएव हम सभी लोगों को **मुम्बई में मनो-बीज 'मुं'-वीज का ध्यान करते हुए संसार की सबसे बड़ी सम्पदा 'श्रेयत्व' को प्रदान करनेवाली भगवती महा-लक्ष्मी की आराधना** करनी चाहिए।

श्री ऋतशील शर्मा जी ने भाव-विभोर होकर यह रहस्योद्घाटन भी किया कि आज जिस भूमि पर **'मुम्बई'-शाक्त-सम्मेलन** सम्पन्न हो रहा है, वह भूमि अर्थात् **बोरीवली, मलाड**–हम सबके लिए **परम श्रद्धेय गुप्तावतार बाबाश्री मोतीलाल जी मेहता के 'मुम्बई'-प्रवास की प्रथम पड़ाव** थी। यहाँ **'बोरीवली'** में **२४ सितम्बर, १९२४** को **'मुम्बई'** पधार कर उन्होंने रात्रि में विश्राम किया और **२९ सितम्बर, १९२४** से **'मुम्बई' में पहली बार 'नवरात्र'** सम्पन्न करने के लिए वे विराजमान हुए थे।

'मुम्बई' में **बाबाश्री की पहली नवरात्र** का वर्णन करने के बाद **श्री ऋतशील शर्मा जी** ने **बाबाश्री** के उन बहु-उपयोगी उपदेशों की चर्चा की जो **'मुम्बई'** में रहकर उन्होंने दिए थे। उन्होंने बताया कि **'मुम्बई'** में **प्रपञ्च** के साथ **'सागर'** के दर्शन होते हैं। **'सागर'** में ऊँची-ऊँची फेरों में घुमाकर डुबोनेवाली भँवरों के दर्शन यहाँ के निवासियों को प्रायः होते हैं। इन्हीं **'भँवरों'** का उदाहरण देते हुए **बाबाश्री** कहते हैं–

प्रपञ्च अर्थात् **'भव-सागर'** में फेरों में घुमाकर डुबोनेवाली भँवर का वर्णन **भगवान् कृष्ण** ने **'गीता'** में इस प्रकार किया है–संसार में **'सङ्ग'** से **'काम'** (नाना प्रकार की इच्छाएँ आदि) उत्पन्न होता है। **'काम'** से **'क्रोध'** होता है। **'क्रोध'** से **'मोह'**, **'मोह'** से **'स्मृति-विभ्रम'** होता है और **'स्मृति-भ्रंश'** से **'बुद्धि-नाश'** होती है। **'बुद्धि-नाश'** से सब कुछ नष्ट हो जाता है।

इससे बचने के लिए यद्यपि **'गीता'** में स्पष्ट रूप से कुछ कहा नहीं गया है, फिर भी हमारे पास एक ही उपाय है अर्थात् **'सङ्ग'** से **'शक्ति'**–कुछ करने का भाव उत्पन्न करो। **'भाव'** से **'विज्ञान'** (रहस्य का दर्शन) प्राप्त करो और **'विज्ञान'** से **'श्रेय'** की प्राप्ति करो।

'मुम्बई'-वासियों को **'गीता'** के आधार पर **बाबाश्री** के उक्त महत्त्व-पूर्ण **'उपदेश'** को बताने के बाद **श्री ऋतशील शर्मा जी** ने **'मुम्बई'** में सन् १९४५ में **बाबाश्री** के द्वारा रचित तीन भजनों **१. 'देखा कहिं प्रभु को किसने'**, २. **'जय जगदम्ब जय जगदम्ब'** तथा ३. **'जीवन-सार न जाना मन तैं, जीवन-सार न जाना'** को अपने स्वर से बोलकर सुनाया।

–**'कुल-वाणी-रत्न' पं० महेन्द्र मिश्र**